चन्दामामा
नवंबर १९९५
5

अपने प्यारे चहेतें के लिए जो हो दूर सुदूर
है न यहाँ अनोखा उपहार जो होगा प्यार भरपूर

चन्दामामा

प्यारी-प्यारी सी चंदामामा दीजिए उसे उसकी अपनी पसंद की भाषा में—
आसामी, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड
मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल या तेलुगु
—और घर से अलग कहीं दूर रहे उसे लूटने दीजिए घर की मौज-मस्ती

चन्दे की दरें (वार्षिक)

आस्ट्रेलिया, जापान, मलेशिया और श्रीलंका के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. 117.00 वायु सेवा से रु. 264.00

फ्रान्स, सिंगापुर, यू.के., यू.एस.ए.,
पश्चिम जर्मनी और दूसरे देशों के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. 123.00 वायु सेवा से रु. 264.00

अपने चन्दे की रकम डिमांड ड्रॉफ्ट या मनी ऑर्डर द्वारा
'चन्दामामा पब्लिकेशन्स' के नाम से निम्न पते पर भेजिए:

सर्क्युलेशन मैनेजर, चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.

माताओं
पोलियो का उन्मूलन आप के बस की बात हैं

९ दिसम्बर और २० जनवरी के दिनांक राष्ट्रीय पोलियो निरोधक दिनों के रूप में घोषित हैं।

आपने पहले ही अपनी सन्तान को टीका की दवाई दी होगी, पर संरक्षा की दृष्टि से दुबारा पास के पोलियो निरोधक कैम्प में ९ दिसम्बर व २० जनवरी के दिन । तीन साल के अन्दर के बच्चों को टीका की दवाई दीजियेगा ।

स्वस्थ बच्चों का भविष्य अपने ही देश का भविष्य है

ईसवी २००० तक पोलियो रहित भारत के निर्माण में सहर्ष योगदान देंगे

PolioPlus

दिसम्बर ९, १९९५
जनवरी २०, १९९६

दिनांक

याद रखियेगा। ये दिन आपके बच्चों की संरक्षा के दिन हैं।

Say "Hello" to text books and friends
'Cause School days are here again
Have a great year and all the best
From Wobbit, Coon and the rest!

It's time to go back to school again. Time for text
books. Time for games. Time to meet old friends.
And make new ones. Time to start studying
again. Because there's so much to learn about
the world around you.
From all of us here at Chandamama, have a
great year in school. And remember to tell us
what you've learnt everyday, when you
come home from school !
SUPER
THE
HANDAMAMA
OLLECTION
ARTIG1246

चन्दामामा

१९९८

एक प्रति : ५.००

वार्षिक चन्दा : ६०.००

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

भाषाओं के विकास की आवश्यकता

हमारे पाठकों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि संसार में भारत ही एक ऐसा देश है, जिसे भिन्न विषयों में ज्ञान प्राप्त करने के लिए विदेशी भाषा पर आधारित रहना पड़ता है। अत्यधिक शैक्षणिक संस्थाओं में आज भी शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी ही है।

दक्षिण कोरिया जैसे छोटे देश में भी, साधारण विषय से लेकर ज्ञानवर्धक विषय भी, उसी देश की भाषा में लिखे व सिखाये जाते है। हाँ, यह सच है कि भारत विशाल देश है। यहाँ पंद्रह से अधिक प्रादेशिक भाषाएँ हैं। इन भाषाओं का इतना विकास भी नहीं हो पाया है कि विभिन्न विषयों पर इनमें साहित्य हो। विशेषतया विज्ञान तथा तकनीकी विद्या के विभिन्न कोणों पर प्रकाश डालने की आवश्यक क्षमता इनमें नहीं है।

मातृभाषा ही शिक्षा का माध्यम हो, इसपर दो प्रकार की रायें हैं। एक वे है, जो मातृभाषा को ही शिक्षा का माध्यम बनाने पर ज़ोर दे रहे हैं। दूसरों की राय है कि इस संबंध में हमें उतावले नहीं होना चाहिये, साथ ही सख्ती भी बरतनी नहीं चाहिये; उदार रहना चाहिये। बहुत सालों से प्रादेशिक भाषाओं में भिन्न विषयों पर पुस्तकें प्रकाशित होती आ रही हैं। हाई स्कूलों तक इन पुस्तकों को उपयोग में लाया जा रहा है। किन्तु कालेजों में विविध विषयों की शिक्षा अंग्रेज़ी में ही दी जा रही है।

अंग्रेज़ों के इस देश से चले जाने के बाद भी अंग्रेजी को ही हम महत्व देते आ रहे हैं। प्रादेशिक भाषाओं के विकास में यह बाधक बनी हुई है। अब हमें प्रादेशिक भाषाओं के विकास में जुट जाना चाहिये। उन्हें इतना समृद्ध बनाना चाहिये कि वह शिक्षा का माध्यम बने।

वर्ष : ४९ नवंबर १९९५ अंक : ३

एक प्रति : रु. ५/- वार्षिक चन्दा : रु ६०/-

चन्दामामा
चांदोबा
चन्दामामा
CHANDAMAMA

थायलांड में सात दलों का शासन

जुलाई, दूसरी तारीख़ को थाइलांड की लोक-सभा के लिए आम चुनाव हुए। इसमें चार्टथाय ने अधिक स्थान जीते। इस दल के नेता बास हार्न शिल्पा-अर्चा, थायलांड के इक्कीसवें प्रधान-मंत्री बने। इसके पूर्व, डेमाक्रटिक दल के नेता चुवान लीकयाय ३३ महीनों तक प्रधान मंत्री के पद पर आसीन रहे।

थायलांड, पहले सयाम के नाम से पुकारा जाता था। संपूर्ण रूप से यह शाही व्यवस्था में था। १९३२ में यहाँ विद्रोह हुआ। फलस्वरूप लोकतंत्र की स्थापना हुई। इससे राजा बने राज्याधिपति और प्रधान मंत्री बने शासन के अधिपति। आग्नेशिया में सयाम ही एक ऐसा देश है, जो किसी पराये देश का उपनिवेश नहीं बना।

१९३९ में सयाम का नाम रखा गया थायलांड। १९४६ में भूमिबोल अद्युल्यदेज, सिंहासन पर आरूढ़ हुए। पिछले पचास सालों से वे ही शासन चलाते आ रहे हैं। उन्होंने ही बात हार्न शिल्पा अर्चा को इक्कीसवां प्रधान मंत्री घोषित किया।

थायलांड की लोक-सभा में कुल स्थानों की संख्या है, ३९१। हाल ही में संपन्न चुनावों में चार्टथाय के दल ने ९२ स्थानों में जीत पायी। डेमाक्रटिक दल ने ८९ स्थानों में विजय पायी। इस वजह से किसी भी दल को, सरकार बनाने की अत्यधिकता प्राप्त नहीं हुई। न्यू यास्पिरेशन दल (५७) पलांग धर्मा (२३) सोशल याक्शन पार्टी (२२) थाय सिटिजन्स पार्टी (१८) मास पार्टी (तीन) नामक विपक्षी दलों ने चार्टथाय दल को अपना सहयोग घोषित किया। बान हार्न शिल्पा-अर्चा ने प्रधान मंत्री बनने का दावा किया, क्योंकि विपक्षी दलों ने भी अपना सहयोग ज़ाहिर किया। सात दलों की सम्मिलित संख्या है २१३। वे शासन-भार को संभालने के हक़दार हुए।

पाँच दलों के उम्मीदवारों को पाँच उपप्रधान मंत्री पद प्रदान किये गये। नामथाय दल को सुरक्षा, यातायात, कृषि तथा अंतर्देशीय शाखाएँ सौंपी गयीं। इस प्रकार विभिन्न दलों में समझौता हुआ।

चुनाव के दौरान इन दलों के नेताओं ने जनता को वादा किया था कि वे अपने शासन-काल में भूमि-सुधार करेंगे और ग़रीबी का निर्मूलन करेंगे।

वज्रसेन का निर्णय

बहुत पहले की बात है। वज्रगिरि नामक एक छोटे-से शहर में वज्रसेन नामक एक व्यापारी था। व्यापार में उसने करोड़ों रुपये कमायें, पर बहुत समय तक उसकी कोई संतान नहीं हई। उसे इसका बहुत ही दुख था। लंबी अवधि के बाद उसके दो पुत्र हुए। विनय और विजय उनके नाम थे। वज्रसेन और उसकी पत्नी ने दोनों पुत्रों की देखभाल बड़े ही प्यार से की। अपनी ममता लुटाकर उनका पालन-पोषण करने लगे।

बचपन से विजय अपने काम स्वयं करने की प्रवृत्ति रखता था। विनय की प्रवृत्ति इससे बिलकुल भिन्न थी। छोटे से काम के लिए भी वह अपनी माता या दास-दासियों पर निर्भर रहता था।

रूपमति अपने छोटे पुत्र विजय की प्रवृत्ति को देखकर घबराती थी। उसे लगता था कि उसका छोटा लड़का उससे दूर होता जा रहा है। वज्रसेन को अपनी पत्नी से जब यह बात मालूम हुई तो उसने कहा कि लड़के की यह स्वतंत्र प्रवृत्ति अच्छी ही है, इसलिए उसकी जैसी इच्छा है, वैसे ही उसे रहने दो।

इस प्रकार दो भिन्न स्वभावों के पुत्र बढ़ते गये और उन्होंने अपना विद्याभ्यास भी समाप्त किया।

वज्रसेन इसी अवसर की प्रतीक्षा में था। वह दोनों पुत्रों को व्यापार में स्वयं प्रशिक्षण देने लगा। इस कारण, थोड़े ही दिनों में वज्रसेन जान पाया कि दोनों में से विजय ही चुस्त है। वज्रसेन के व्यापार के भागीदार तथा परिजन विजय की तीक्षण बुद्धि की प्रशंसा करने लगे। साथ ही कहा करते थे कि विनय की तरह का गुणवान तथा पिता की आज्ञाओं का पालन करनेवाला, ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलेगा।

थोड़े दिनों के बाद वज्रसेन ने अपने बेटे

विजय को बुलाया और उससे कहा "अब तुम स्वयं ही व्यापार की जिम्मेदारी को संभाल सकने की योग्यता रखते हो। इससे पहले कि तुम व्यापार शुरु करो, तुम्हें मेरी एक सलाह है। जब मैंने व्यापार प्रारंभ किया था, तब मेरे पास बहुत ही कम पूँजी थी। इस कारण मुझे कुछ लोगों को भागीदार बनाना पड़ा। हाँ, यह अवश्य है कि व्यापार में लाभ मेरी अक़्लमंदी के कारण ही हुआ है, पर उसे भागीदारों में बाँटता आया। नया व्यापार शुरु करने के लिए जितनी पूँजी तुम्हें चाहिये, तुम्हें देने की क्षमता अब में रखता हूँ। यह पूँजी लेकर तुम हमारे पड़ोस के विशालनगर में जाओ। वहाँ नारियलों की ख़ास मांग है। अपनी अक़्लमंदी को काम में लाओ और वहाँ यह व्यापार शुरु कर दो।"

विनय ने बड़े ही उत्साह से 'हाँ' कह दिया।

वज्रसेन भी अपने बेटे के धैर्य पर संतुष्ट हुआ और कहा "पर, एक ज़रूरी बात तुमसे कहनी है। मेरे भागीदार वरुणदत्त ने समाचार भेजा था कि वह अपनी बेटियाँ मालविका और मृणालिका का विवाह तुमसे और विनय से करना चाहता है। दोनों रूप और विद्याओं में संपन्न हैं। किन्तु तुलना में देखा जाए तो मालविका, मृणालिनी से सब क्षेत्रों में आगे है। चूँकि उम्र में वह बड़ी है, अतः उसका विवाह विनय से हो तो अच्छा होगा। मृणालिनी से विवाह रचाने में तुम्हें कोई आपत्ति तो नहीं है ना?"

एक क्षण मौन रहकर विजय ने कहा "मृणालिनी के बारे में सिर्फ़ सुना ही नहीं बल्कि एक बार देखा भी था। मैं उससे विवाह करने सन्नद्ध हूँ।"

पति द्वारा रूपमति ने अपने पुत्रों के विवाह संबंधी सारी बातें जानीं। साथ ही जब उसे मालूम हुआ कि विजय व्यापार करने विशाल नगर जानेवाला है तो उसे दुख भी हुआ।

वज्रसेन के निर्णय के अनुसार ही थोड़े ही दिनों में, विनय का विवाह मालविका से और विजय का विवाह मृणालिनी से संपन्न हुआ।

विवाह के उपरांत वज्रसेन, विजय व

मृणालिनी को लेकर विशालनगर आया। वहाँ आवश्यक प्रबंधों के बाद लौटने लगा। निकलने के पहले उसने विजय से कहा "पुत्र, व्यापार के कामों से मैं अब थक गया हूँ। समुद्री तट का यह प्रदेश मुझे बहुत पसंद आया है। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारी माँ के साथ यहाँ कुछ समय तक आराम करूँ। तुम्हारी क्या राय है ?"

विजय मुस्कुराता हुआ बोला "जिस दिन आपने मुझे विशालनगर व्यापार करने के लिए जाने को कहा और प्रोत्साहन दिया, उसी दिन मैं जानता था कि आप ऐसा कहनेवाले हैं। पिताजी, यह आपका घर है। अपने घर में रहने के लिए क्या किसी की अनुमति की ज़रूरत पड़ती है? बड़े होते हुए पुत्र स्वतंत्र रूप से विचरें, व्यापार करें, अपनी वृत्ति में दक्ष हों, इससे बढ़कर उनके माता-पिता को और क्या चाहिये ? यह तो माता-पिता की जिम्मेदारी भी है कि वे उन्हें सही मार्ग दर्शायें। उसी तरह संतान की भी यह जिम्मेदारी है कि अपने बूढ़े माँ-बाप की सेवा करें, उन्हें हर प्रकार की सुविधा प्रदान करें।"

अपने पुत्र के उत्तर से वज्रसेन बहुत आनंदित हुआ। जब वह वज्रगिरि लौटा, तब उसने यह बात सिर्फ़ अपनी पत्नी से कही।

रूपमति ने झट सवाल किया "क्या आप सचमुच थक गये और विश्राम लेना चाहते हैं ?"

वज्रसेन ने हँसते हुए कहा "तो क्या तुम इसे झूठ समझती हो ?" रूपमति ने कहा, "मुझे तो झूठ ही लगता है। व्यापार अथवा किसी दूसरे क्षेत्र में, विजय को आपकी सहायता की आवश्यकता नहीं है। पर, विनय आपके बिना एक क्षण भी रह नहीं पायेगा। आपकी अनुपस्थिति में, व्यापार में घाटा भी हुआ है, जिसपर वह बहुत दुखी है। विनय बलहीन है। माता-पिता होने के नाते हमारा यह कर्तव्य बनता है कि हम उसी के साथ रहें। अलावा इसके, वह और बहू किसी भी हालत में हमें जाने नहीं देंगे।"

पत्नी की बातें सुनकर वज्रसेन ने कहा

"तो एक काम करो। बहू से बताओ कि हम थोड़े दिनों के लिए विश्राम लेने विजय के पास जानेवाले हैं। किन्तु यह बात विनय की ग़ैरहाज़िरी में ही बताना।"

रूपमति ने कहा "ठीक है। आपने जैसा कहा, वैसा ही करूँगी। पर मेरा दृढ़ विचार है कि विनय को छोड़कर विजय के पास जाने के लिए बहू कदापि नहीं मानेगी।" मुरझाया हुआ मुख लेकर, दूसरे दिन जब रूपमति आयी तो वज्रसेन ने पूछा "क्या उससे बात की?"

"हाँ, बात हुई" आँखों में आँसू भरती हुई बोली "उसकी बातों से लगता है कि हमारा यहाँ रहना उसे बिलकुल पसंद नहीं है। पहले तो वह मौन रही। फिर बोली, विजय भी तो आपका बेटा है। उसके साथ रहना भी न्यायसंगत है। यों कहकर उसने अपना समर्थन कर लिया।" रूपमति ने संक्षेप में दुख-भरे स्वर में बताया।

वज्रसेन ने पूछा "तो, विजय के पास जाने से तुम्हें कोई एतराज़ नहीं है ना?" रूपमति ने कहा "विनय.को मानना होगा ना।"

"मैं उसे मनाऊँगा। आज के दसवें दिन ही यहाँ से निकलेंगे" वज्रसेन ने अपना निर्णय सुनाया।

दूसरे दिन वज्रसेन ने, विनय से बताया "तुम्हारी माँ और मैं विजय के साथ रहने जानेवाले हैं। मैं तो स्पष्ट नहीं कह सकता कि कब लौटेंगे। आगे से यहाँ का पूरा व्यापार तुम्हें ही संभालना होगा। ज़रूरत पड़े तो अपने ससुर वरुणदत्त से आवश्यक सलाहें लो। पर,

तुम्हारे पास रहना चाहते हैं तो तुमने कहा कि मैं जानता था कि आप भविष्य में ऐसा कहेंगे। अब तुम्हारा भाई व्यापार में दक्ष हो गया है, बहुत कमा रहा है। क्या तुम अब बता पाओगे कि मैं तुमसे क्या पूछने जा रहा हूँ?''

''क्यों नहीं? यह तो मैंने बहुत पहले ही सोच रखा था। हम यहाँ व्यापार बंद करनेवाले हैं और सब स्वस्थल वज्रगिरि लौटनेवाले हैं। पिताजी, मैंने सही ही सोचा था ना?'' विजय ने तक्षण ही बताया।

पास ही खड़ी, रूपमति ने आश्चर्य भरे स्वर में पूछा ''हाँ, यह ठीक है कि हम वज्रगिरि लौटनेवाले हैं। किन्तु उसका, यहाँ के व्यापार से क्या संबंध? हम क्यों यहाँ व्यापार ना करें? आप यह तो बताइये कि अगर ऐसा करना ही था तो वज्रगिरि छोड़कर यहाँ क्यों आये? यहाँ नया व्यापार शुरु करने की ज़रूरत ही क्या थी?'' यों उसने प्रश्न पर प्रश्नों के बौछार किये।

वज्रसेन ने शांत स्वर में उत्तर दिया ''मेरे पास अब इतना समय नही है कि तुम्हारे प्रश्नों के उत्तर दूँ। जब वज्रगिरि लौटेंगे तो आराम से, चाहो तो और भी प्रश्न जोड़कर, पूछना, सबके उत्तर दूँगा।''

सब वज्रगिरि लौटे। एक दिन रूपमति ने, विशालनगर में उसके किये गये सवालों को दुहराया। तब वज्रसेन ने कहा ''अच्छा हुआ

एक बात अच्छी तरह याद रखो। व्यापारी को चाहिये कि निर्णय स्वयं ले और वे भी शीघ्र। तभी व्यापार में ही नहीं बल्कि जीवन में भी निखर सकते हो।'' दसवें दिन पति-पत्नी विजय के यहाँ जाने निकल पड़े।

वज्रसेन, विशालनगर में रहने लगा, किन्तु वज्रगिरि की सारी बातें वह जानता ही रहा। दो महीनों के बाद उसे मालूम हुआ कि विनय व्यापार में दक्ष हो गया है और उसने बहुत धन कमाया। वज्रसेन ने भी उस सीमित अवधि में इतना धन कमाया नहीं होगा।

विनय की इस प्रगति पर वज्रसेन बहुत ही खुश हुआ। उसने विजय से कहा ''पुत्र, कुछ दिनों पहले, जब मैंने तुमसे कहा था कि हम

कि अपने संदेहों को, बिना किसी झिझक के पूछ बैठी। अगर ऐसा नहीं करती तो मन ही मन तुम्हें संदेह होता रहता कि मैं बाप होकर किसी एक ही बेटे का पक्ष ले रहा हूँ; पक्षपात कर रहा हूँ। व्यापार - संबंधी निजी निर्णय लेने में विनय कमज़ोर है। बचपन से ही उसमें यह कमज़ोरी मैं देखता आ रहा हूँ। अन्यों पर आधारित रहने की यह बलहीनता उसमें प्रारंभ से ही है। इसीलिए, मैंने दोनों बहनों में से अक़्लमंद व होशियार मालविका से उसकी शादी रचायी।'' और कुछ बताने जा रहा था तो रूपमति ने अनिच्छा से अपना सर हिलाया।

यह देखकर वज्रसेन ने पूछा ''लगता है, तुममें कोई नया संदेह जगा है।''

''अगर मालविका सचमुच अक़्लमंद व होशियार है तो विनय को सलाह देती; सहयोग देती; सहायता करती। उसने तो ऐसा कुछ नहीं किया।'' रूपमति ने अपना संदेह प्रकट किया। ''उसका कारण भी बताता हूँ, सुनो। मालविका समझ गयी कि जब तक मैं यहाँ हूँ, तब तक उसका पति उससे सलाहें नहीं लेगा। उसका हस्तक्षेप उसे पसंद नहीं आयेगा। इसी कारण, हमारे विशालनगर जाने में, उसने कोई आपत्ति नहीं उठायी। बड़ी ही होशियारी से उस स्थिति को उसने संभाला। सूक्ष्मग्राही विजय मेरी योजना की कल्पना पहले ही कर चुका था। जो भी हो, मुझे इस बात पर खुशी हुई कि विनय ने, हमारी अनुपस्थिति में, भली-भांति व्यापार संभाला। अच्छी तरह सोच-विचारकर स्वयं निर्णय लिये और समस्याओं का परिष्कार किया। मेरे निर्णय भी सही निर्णय प्रमाणित हुए। जो चाहा था, जब हो गया तो विजय विशालनगर में क्यों रहे? यहाँ दोनों भाई व्यापार सक्षमता से संभालेंगे और उन्नति करते जाएंगे।''

चकित होती हुई रूपमति ने कहा ''मुझसे छिपाकर आपने तो बहुत ही बड़ी चाल चली। मुझे खुशी है कि आप उसमें सफल भी हो गये। इससे बढ़कर मुझे भला और क्या चाहिये।''

निस्वार्थ इच्छा

एक वृद्ध देश भर घूमता रहा। एक पहाड़ी प्रांत में उसे चमकता हुआ शीशा दिखायी पड़ा। वृद्ध ने, उस शीशे को हाथ में लिया और उसका ढक्कन खोला। तक्षण ही एक भूत बाहर कूद पड़ा और कहा "मुझे बंधन से मुक्त किया। तुम्हारी कोई एक इच्छा पूरी करने तैयार हूँ। परंतु, मुझे विश्वास होना चाहिये कि वह इच्छा निस्वार्थ है। तुम किसी देश का राजा बनना चाहते हो या किसी राजकुमारी से शादी करना चाहते हो तो तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं करूँगा।"

उस वृद्ध ने तुरंत कहा "पचास सालों के पहले मुझमें और मेरे भाई में बैर हो गया, जिससे हम अलग हो गये। तुम ऐसा प्रयत्न करो, जिससे हम दोनों भाई एक हो जाएँ। मेरा भाई मेरा आदर करे।"

"वाह, वाह, भाई के प्रति तुम्हारा प्रेम अपूर्व है, अद्वितीय है।" कहकर भूत ग़ायब हो गया और थोड़ी देर बाद आकर बोला" तुम्हारी इच्छा पूरी कर दी। तुम्हारा भाई तुम्हें ढूँढ़ता हुआ आ रहा है।"

वृद्ध ने संदेह-भरे स्वर में कहा "मेरी इच्छा में तुम्हें स्वार्थ की गंध आये तो क्या कहीं अपना वर वापस तो नहीं लोगे?"

"ऐसा कभी नहीं होगा। कभी के बिछड़े अपने भाई से मिलना चाहते हो। अवश्य मिलो। पर यह तो बताओ कि बुढापे में क्षीण होकर तुम्हें कहीं मर जाने का डर है ? क्या इसी डर से अपने भाई से मिलना चाहते हो?" राक्षस ने पूछा।

इस बार वृद्ध ज़ोर से हँस पड़ा और बोला "ऐसा कोई भय नहीं। मेरा भाई मुझसे दस साल बड़ा है। वह इस देश का राजा है। उसकी कोई संतान नहीं। मैं एकमात्र उसका वारिस हूँ।"

उसका जवाब सुनकर भूत चकित रह गया और चिल्लाता हुआ पहाड़ों की तरफ़ उड़ता हुआ चला गया। - **महीधर**
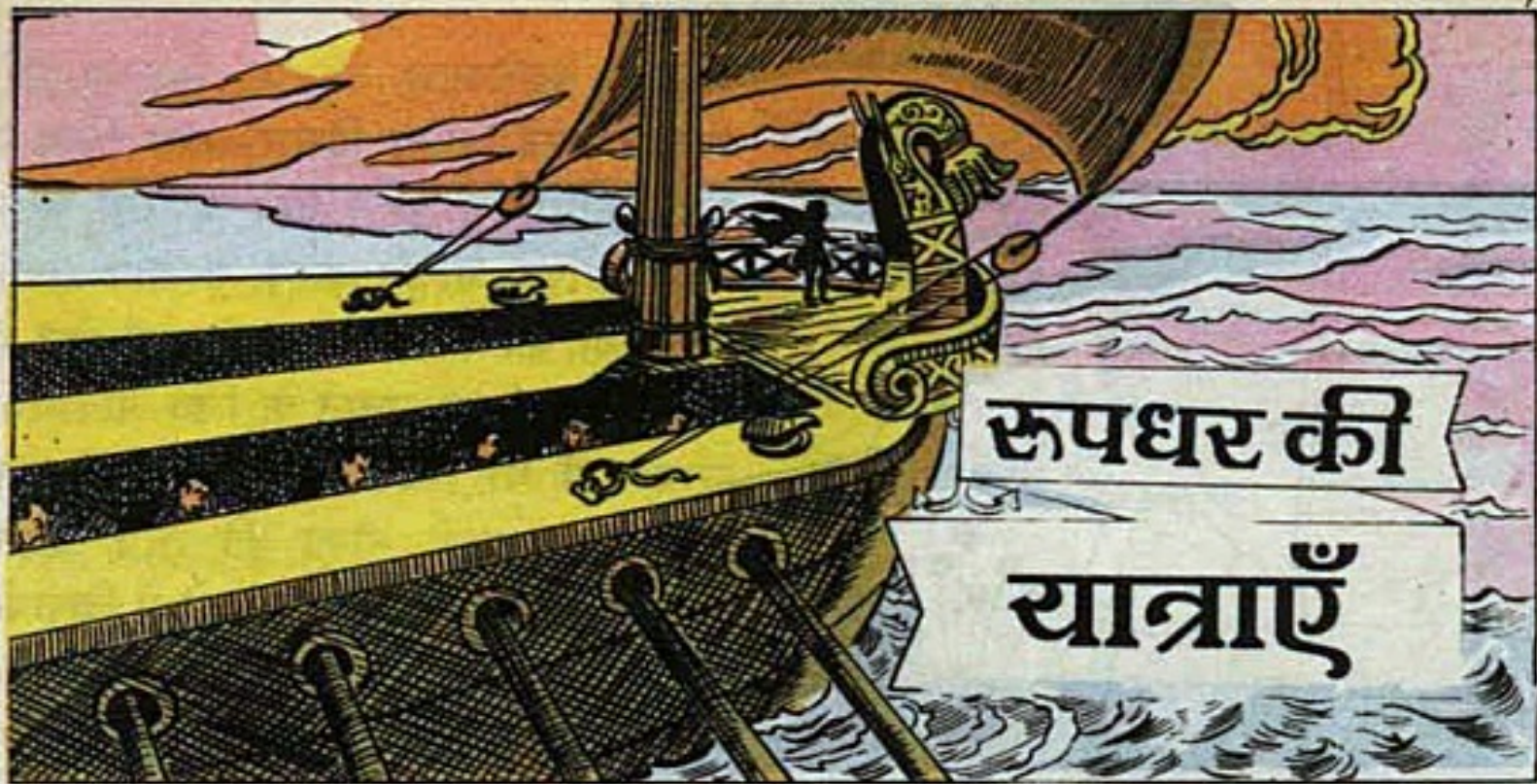
४

(रूपधर फाललोचन के चंगुल से बच गया। वह और उसके अनुचर नौका द्वीप पर पहुँचे। उस द्वीप के शासक चित्राश्व से उन्होंने पर्याप्त सहायता पायी। उसने, उन्हें सब वायुवों को एक थैली में बंद करके दिया। रूपधर की नौकाएँ लगभग स्वदेश के तट पर पहुँचीं। आखिरी क्षण में रूपधर के अनुयायियों ने थैली खोली और वायुओं को स्वच्छंद छोड़ दिया। इस प्रभाव के अधीन होकर उसकी नौकाएँ ध्रुव प्रांत तक बह गयीं। वहाँ के राक्षसों ने, उसकी नौकाओं तथा उसके अनुयायियों को तहस-नहस कर दिया। रूपधर की एकमात्र नौका उनके आक्रमण से बच गयी - बाद)

रूपधर अपने बचे-खुचे अनुयायियों के साथ निकल पड़ा। मृत्यु के मुँह से बच निकलने की वजह से उसे आनंद तो हो रहा था, साथ ही उसे इस बात का दुख भी था कि उसके बाक़ी अनुयायी पथ्थरों के नीचे आकर मर गये और नौकाएँ ध्वंस हो गयीं। वह भूल ही गया कि उसपर संदेह करके उसके अनुयायियों ने वायुवों से भरी फैली खोली। फलस्वरूप इतने सारे कष्टों का सामना उसे करना पड़ रहा है। उन बेचारों को क्या मालूम था कि वह भी उन्हीं की तरह खाली हाथ लौट रहा था।

लंबे अर्से के बाद रूपधर की नौका एक द्वीप में पहुँची। इस द्वीप में सुकेशिनी नामक एक देवी रहती है। इसके केश बहुत ही सुँदर हैं। यह पैदा हुई, सूर्य व वरुणराजा की पुत्री से। मनुष्यों की भाषा बोलती है। परंतु इसका स्वभाव मनुष्यों की भलाई करने

दिखायी देखनेवाला वह घर किसका है? लेकिन उसने अपना विचार बदल लिया। उसने सोचा कि पहले नाव के पास चला जाऊँ। फिर भोजन करने के बाद अपने आदमियों को समाचार जानने वहाँ भेजूँ।

किन्तु, भोजन बनाने के लिए आवश्यक रसद नहीं थी। इसी के बारे में सोचता हुआ, वह अपनी नौका की तरफ़ बढ़ने लगा। तब एक बारहसिंगा रास्ते में दिखायी पड़ा। उसे लगा, मानों भगवान ने ही उसे भेजा हो। उसकी सींगें बहुत ही मज़बूत थीं। धूप ज़्यादा थी, इसलिए अपनी प्यास को बुझाने के लिए नदी की तरफ़ जा रहा था।

का नहीं।

रूपधर को उसके बारे में कुछ भी नहीं मालूम था। तट पर पहुँचने के बाद दो दिन और दो रातें, उसने वहीं बिताये। उसके अनुयायी निरुत्साह में डूबे रहे और निराशा में पड़े रहे।

तीसरे दिन तड़के ही रूपधर अपनी तलवार और भाला लेकर निकला। एक ऊँचे टीले पर चढ़कर चारों ओर अपनी दृष्टि फैलायी। उसे कोई दिखायी नहीं पड़ा, किन्तु उसने देखा कि एक घर की छत से धुआँ निकल रहा है। यह घर सुकेशिनी का था। पहले उसने स्वयं वहाँ जाना चाहा और जानना चाहा कि पेडों के बीच में

मौक़ा पाकर रूपधर ने अपना भाला उसकी पीठ में चुभोया। घायल होकर वह नीचे गिरकर मर गया। रूपधर ने कुछ लताओं को रस्सी की तरह पिरोया और उसे उसके पैरों में बाँध दिया। रस्सी अपने गले में ड़ाल ली और बारहसिंगा को अपनी पीठ पर ड़ाल लिया। झुके-झुके वह जाने लगा। अपनी नौका के पास पहुँचने के बाद उसे ज़मीन पर पटक दिया।

अपने अनुयायियों को बुलाकर, उनमें उत्साह भरने के उद्देश्य से वह कहने लगा "मित्रो, हम इतना शीघ्र मरनेवालों में से नहीं हैं। हमारे लिए यमलोक को और बहुत समय तक इंतज़ार करना होगा। वह

घड़ी अब तक नहीं आयी है कि हम भूख से तड़प-तड़पकर मर जाएँ।''

उसकी बातों को सुनकर निराश अनुयायियों में फिर से उत्साह भर आया। उन्होंने मरे बारहसिंगा को देख लिया। अपने हाथों को धोकर वे उसे जलाने तैयार हो गये। अंधेरा होते तक वे पीते रहे, खाते रहे और उस रात को तट पर ही सोते पड़े रहे।

दूसरे दिन सबेरे, रूपधर ने अपने अनुयायियों से कहा ''मित्रो, यह प्रदेश हमारे लिए नया है। दिशाएँ भी हम नहीं जानतें। मेरी तो समझ में नहीं आ रहा है कि ऐसी हालत में क्या करना होगा? किन्तु हाथ धरे बैठ भी नहीं सकते। हमें कुछ करना ही होगा। तुम सब लोग अपूर्व साहसी हो। ट्रोय के युद्ध में तुमने साबित कर दिया है कि ग्रीक पराजय नहीं जानते, विजय ही उनके गले में वरमाला पहनाती है। साहसी ख़तरों का सामना करते हैं, उनसे मुँह मोड़कर नहीं भागते। समीप ही के एक टीले पर चढ़कर देखा। यह एक द्वीप है। अलावा इसके, समीप कहीं कुछ भी दिखायी नहीं पड़ा। इस द्वीप को देखते हुए लगता है कि यहाँ कोई पहाड़ नहीं है। द्वीप के बीचों बीच पेड़ों की झुरमुट में एक घर दिखायी दे रहा है। वहाँ अवश्य ही कोई रहता होगा। क्योंकि मैंने देखा कि उस घर से धुआँ उठ रहा था।''

उसकी बातें सुनकर उसके अनुयायियों में उत्साह भर आया, आशा बंधी। ऐसी ही परिस्थितियों में एक बार वे फाललोचनों के चंगुल में फँसे तो दूसरी बार राक्षसों के आक्रमण के शिकार बने। उनका स्मरण आते ही वे ज़ार-ज़ार रोने लगे।

इसके बाद रूपधर ने अपने अनुयायियों को दो दलों में विभाजित किया। एक दल का सरदार स्वयं बना। मायावी नामक एक साहसी को दूसरे दल का सरदार बनाया। यह जानने का भार कि वह घर किसका है और उसमें कौन रहते हैं, मायवी पर ड़ाला गया। मायावी को वहाँ जाना पसंद नहीं
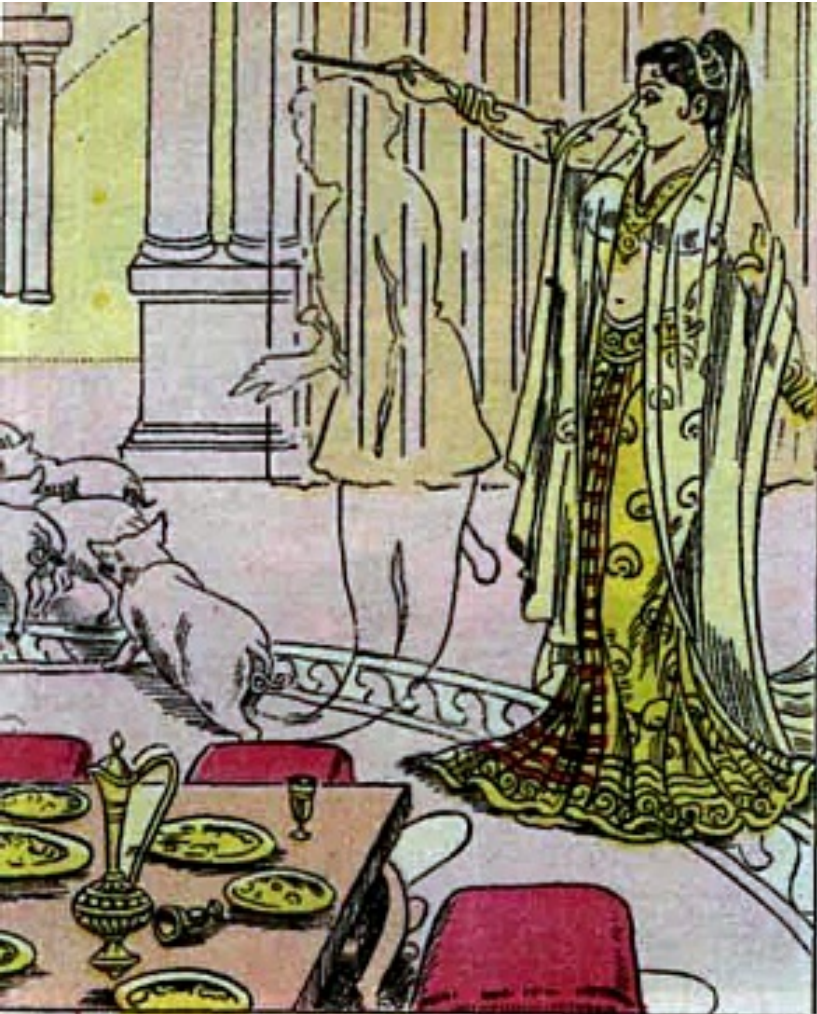
प्यार से उनके पास आये। इस रहस्य से अपरिचित ग्रीक उन्हें देखकर घबरा गये। परंतु साथ ही उन्हें आश्चर्य भी हो रहा था कि ये जंतु क्यों इतने साधु हैं। उन्हें जब विश्वास हो गया कि ये जंतु हमारा कुछ नहीं बिगाड़ेंगे तो वे आगे बढ़े।

घर के पास पहुँचने के बाद, बाहर ही रहकर उन्होंने घर की तरफ़ देखा। उन्होंने देखा कि सुकेशिनी करघा चला रही है और बहुत ही मधुर सुर में गा रही है। उनमें से एक ने कहा "मित्रो, अंदर कोई स्त्री बड़े ही मधुर सुर में गा रही है। अवश्य ही मानव होगी। नहीं तो कोई देवी होगी। उससे बात करते हैं, विलंब क्यों?"

था, फिर भी वह लाचार था। अपने बाईस अनुयायियों को लेकर अपने आप बड़बड़ाता हुआ, भुनभुनाता हुआ निकला।

थोड़ी दूर जाने के बाद नीची ज़मीन पर सुकेशिनी का घर दिखायी पड़ा। घर चिकने पथ्थरों से बना हुआ था। सुंदर था। उसके चारों ओर विशाल ख़ाली जगह थी। घर के चारों ओर सिंह, बाघ आदि जंगली जानवर घूम रहे थे। ये असल में जंतु नहीं थे, मानव ही थे। सुकेशिनी ने अपनी मंत्र-शक्ति से उन्हें जानवर बना दिया। इसलिए वे मायावी या उसके अनुयायियों पर टूट नहीं पड़े। पालतू जानवरों की तरह दुम हिलाते हुए बड़े

तुरंत उन्होंने अंदर की स्त्री को पुकारा। सुकेशिनी बाहर आयी। उन्हें देखा और अंदर आने को कहा। वे उसकी चाल समझ नहीं सके। अबोध बनकर उसके पीछे-पीछे गये। किन्तु सुकेशिनी को देखते ही मायावी को संदेह हुआ। उसे दाल में कुछ काला लगा। इसलिए वह अकेला बाहर रह गया।

जो-जो उसके साथ आये, उन सबको सुकेशिनी ने रुचिकर आहार-पदार्थ दिये, पेय पिलाया। पर उन पदार्थों में उसने कुछ दवाएँ मिलायीं। इसलिए उन पदार्थों को खाते हुए दुनिया को वे भूलने लगे। उसके बाद अपने मंत्र-दंड से उसने सबका

स्पर्श किया। तुरंत वे सुवर बन गये और चिल्लाने लगे। हाँ, उनके रूप तो पूरे के पूरे बदल गये, किन्तु उनके मन नहीं बदले। सुकेशिनी ने उन्हें सुवरो के रूप में परिवर्तित करके पिछवाड़े में भगाया। वे उस क़ैद में रहकर सुवरों का खाना ही खाने लग गये।

सुकेशिनी के माया-जाल से बचा मायावी नौका के पास लौटा। बहुत देर तक उसकी ज़बान ही नहीं खुली। उसकी आँखों से आँसू बहते जा रहे थे। रूपधर और दूसरों ने सवालों की बौछार की। जब वह संभल गया, तब उसने बीती सब बतायी।

उसने कहा "तुम्हारे कहे अनुसार हम उसी तरफ़ गये। वहाँ नीची जगह पर एक सुँदर घर था। अंदर कोई स्त्री करघा चला रही थी और बहुत ही मधुर स्वर में गा रही थी। हमने उसे पुकारा। वह आयी और सबको अंदर ले गयी। मुझे लगा कि इसमें अवश्य ही कोई धोखा है। मैं बाहर रह गया। अंदर जो थे, वे फिर बाहर नहीं आये। उनपर क्या बीती, मालूम नहीं हुआ।"

यह समाचार सुनते ही क्रोध और आवेश में आकर रूपधर ने म्यान से तलवार निकाली और चिल्ला पड़ा "चलो मेरे साथ। मुझे वह घर दिखाओ।" मायावी ने रूपधर के पाँव पकड़ लिये और कहा "मुझे वहाँ आने को मत कहो। मैं वहाँ नहीं आऊँगा। यहीं रहूँगा। मुझपर दया करो। तुम वहाँ जाओगे तो वापस आना असंभव है। तुम्हारे साथ आऊँगा तो मैं भी ग़ायब हो जाऊँगा। अपने को तथा हमें ज़िन्दा देखना चाहते हो तो यह जिद छोड़ो। चलो, इस भयानक स्थल को छोड़कर चले जाएँ।"

"ठीक है मायावी। तुम्हें मेरे साथ आने की ज़रूरत नहीं। तुम इसी नाव के पास रहो। खाओ, पीओ, मस्त पड़े रहो। मैंने तो वहाँ जाने का अटल निश्चय किया है" दृढ़ता-भरे स्वर में रूपधर ने कहा।

रूपधर वहाँ पहुँचा और सुकेशिनी का घर देखा। तब वहाँ एक युवक सामने से आया। उसने पूछा "अरे बेचारे, कहाँ जा रहे हो?

वचन देने को कहो कि वह तुम्हारा अहित नहीं करेगी।" कहते हुए उस युवक ने भूमि से एक पौधे को उखाड़ा और उसे दिया। उस पौधे की जड़ काली थी। पर उसका फूल बिलकुल ही सफ़ेद था।

युवक के चले जाने के बाद रूपधर गहरी सोच में पड़ गया। फूँक-फूँककर क़दम बढ़ाता हुआ, सुकेशिनी के घर के पास आया। वहाँ पहुँचकर ज़ोर से चिल्लाया। तुरंत सुकेशिनी दरवाज़ा खोलकर बाहर आयी। वह उसके साथ अंदर गया। किन्तु उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धडक रहा था।

उसने रूपधर को काठ से बनी एक कुर्सी में बिठाया। पैरों के पास एक पाटा रखा।

क्या तुम्हें मालूम है कि दीखनेवाला वह घर सुकेशिनी का है। तुम्हारे सब आदमी सुवर बना दिये गये हैं और क़ैदख़ाने में हैं। क्या तुम भी सुवर बनने की इच्छा रखते हो? जाना ही है तो अवश्य जाओ। मैं तुम्हें एक बूटी दूँगा। सुकेशिनी तुम्हारे पेय में दवा मिलाकर देगी। इस बूटी की वजह से तुमपर उसका कोई असर नहीं होगा। इसके बाद अपने मंत्र-दंड से स्पर्श करेगी। फ़ौरन अपनी तलवार निकालो और उसपर टूट पड़ो, मानों तुम उसे मारने जा रहे हो। वह ड़र जायेगी और कहेगी कि मैं तुम्हारी पत्नी बनूँगी। इसके लिए तुम अपनी स्वीकृति दो। परंतु इससे पहले उससे देवताओं पर क़सम खाकर

फिर अंदर गयी और पेय लायी, जिसमें दवा मिलायी गयी थी। उसने गिलास को उसके सामने रखा। उसने पी लिया, परंतु बूटी के प्रभाव से उस दवा ने उसपर कोई असर नहीं किया।

सुकेशिनी को यह मालूम नहीं था। वह मंत्र-दंड से उसका स्पर्श करती हुई बोली "जाओ, सुवरों के क़ैदखाने में अपने अनुयायियों के साथ रह।"

रूपधर ने तक्षण ही तलवार निकाली और उसपर टूट पड़ा। वह भय से सिहर उठी। उसके पाँव पकड़कर उसने कहा, "तुम कौन हो? इस विशाल सृष्टि के किस भाग से आ रहे हो? तुम्हारे नगर का क्या

नाम है ? तुम्हारे माँ-बाप कौन हैं ? मेरी दवा ने तुमपर प्रभाव नहीं डाला । इससे स्पष्ट है कि तुम कोई असाधारण मनुष्य हो । अवश्य ही तुम रूपधर ही हो । पहले ही देवता मुझे सूचित कर चुके थे कि रूपधर मुझसे मिलने आनेवाला है । हम दोनों एक दूसरे के शत्रु ना बनें । उस तलवार को म्यान में रख दो । मुझसे शादी करो । हम दोनों एक होकर रहेंगें ।''

''तुमने मेरे अनुयायिकों को सुवर बना दिया और उन्हें क़ैदखाने में बंद किया । हम दोनों में एकता कैसे हो सकती है? मुझे भी तुमने सुवर बनाना चाहा । जब यह संभव नहीं हो पाया तब मेरी पत्नी बनने का नाटक कर रही हो । तुम अगर वचन दो कि मेरा अहित नहीं करोगी, तो तुमसे शादी करूँगा । एक होकर रहेंगे ।'' रूपधर ने कहा ।

सुकेशिनी ने वचन दिया । बाद उसकी दासियों ने रूपधर को नहलाया । उसे और अपनी मालकिन को भोजन परोसा । किन्तु रूपधर ने उस आहार को छुआ तक नहीं ।

''मुझपर संदेह क्यों? क्या तुम समझते हो कि मैं फिर से धोखा दूँगी ? मेरा विश्वास करो । अपने वचन को निभाऊँगी ।''

''मेरे अनुयायी जब सुवर बने हुए हैं, तब कैसे यह भोज स्वीकार करूँ? जब तक उन्हें मानव बनाकर मेरे सामने नहीं लाओगी, तब तक मेरी अशांति बनी रहेगी'' रूपधर ने कहा ।

सुकेशिनी ने अपने मंत्र-दंड के बल पर रूपधर के साथियों को मानव बना दिया । रूपधर को देखते ही वे बेहद खुश हुए । उनकी आँखों से आनंद के आँसू बहने लगे ।

सुकेशिनी, रूपधर से बोली ''मैं जैसा कहती हूँ, करो । समुद्र के तट पर जाओ । अपनी नाव को बाहर ले आओ । उसे एक गुफ़ा में सुरक्षित रखो । अपने शेष साथियों को भी लेकर यहाँ आओ ।'' रूपधर ने 'हाँ' कहा ।

- सशेष

छड़ी

हेलापुर का रामावतार साधारण गृहस्थी था। एक दिन उसकी पत्नी ने कुछ सामग्रियाँ लाने के लिए उसे बाज़ार भेजा। वह नगर की अनेकों दूकानों में गया और पत्नी की कही चीज़ें खरीदीं। उन सब चीज़ों को एक कुली के सुपुर्द कीं। जब वह उन्हें ढोकर ला रहा था, तब रामावतार को अचानक याद आया कि उसकी छड़ी उसके हाथ में नहीं है।

रामावतार को लगा कि किसी दूकान में भूल आया हूँ। वह कुली को लेकर हर दूकान में गया और अपनी छड़ी के बारे में उसे पूछता रहा। किन्तु उसे, उसकी छड़ी कहीं नहीं मिली।

ऊबा रामनाथ जब लौट रहा था, तो देखी एक और दूकान, जहाँ उसने चीज़ें खरीदी थीं। उसने वहाँ जाकर अपनी छड़ी के बारे में पूछा।

पास ही पड़ी छड़ी दिखाते हुए दूकानदार ने पूछा कि क्या यही आपकी छड़ी है ?

बहुत खुश होते हुए रामावतार ने अपनी छड़ी लीं और कहा "हेलापुर में जितने भी दूकानदार हैं, उन सबमें से आप ही एकमात्र ईमानदार व्यक्ति हैं। बाक़ी सबने तो साफ़-साफ़ कह दिया कि मेरी छड़ी उनके पास नहीं है।" यों उसने दुकानदार की भरपूर प्रशंसा की।

यह सुनकर दूकानदार चकित रह गया।

-धर्माधिकारी
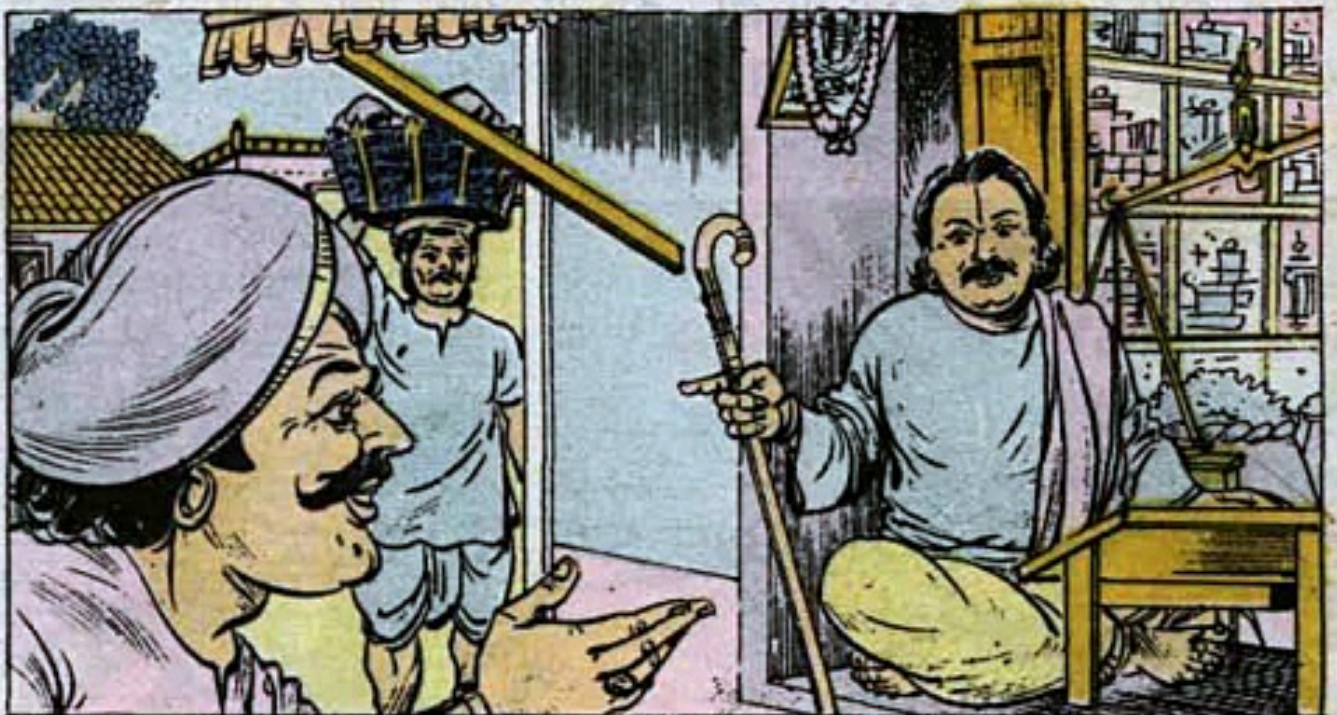
विमल की विजय

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया। पेड़ से शव को उतारकर अपने कंधे पर डाल लिया और यथावत् श्मशान की ओर निर्भीक अग्रसर होने लगा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "राजन्, इस घनघोर अंधकार में आँखें फाड़-फाड़कर देखोगे भी तो कुछ भी दिखायी नहीं देता। फिर भी कार्य-सिद्धि के लिए परिश्रम कर रहे हो। इसे देखते हुए मुझे लगता है कि तुम बड़े ही शक्तिशाली हो, सर्वविद्या-संपन्न हो। इतने योग्य होते हुए भी कुछ ऐसे लोग होते हैं, जो अपनी आधिक्यता को भुलाकर अल्पों के सामने सिर झुकाते हैं। दूसरों के शक्ति-सामर्थ्य का सही अंदाज़ा ना लगा पाने के कारण ऐसा हो जाने की संभावना है। कोल्हू के बैल की तरह की जीवन-पद्धति अथवा बढ़ती उम्र का तक़ाज़ा भी इसका कारण हो सकता है। कारण जो भी हो, ऐसी चेष्टा उनके औन्नत्य में एक काले धब्बे की तरह बच जाता है। मैं नहीं चाहता कि तुम

बेताल कथा

किसी दिन ऐसी स्थिति इस तक फिसल ना जाओ। मैं तो तुम्हारा शुभ-चिंतक हूँ, इसलिए तुम्हें सावधान करने विमल और प्रताप की कहानी सुनाऊँगा। थकावट दूर करते हुए उनकी कहानी ध्यान से सुनो।'' वह आगे यों कहने लगा।

वल्लभापुर का युवक विमल समस्त विद्याओं में पारंगत था। ऐसी कोई विद्या नहीं थी, जो उसे ना आती हो। बचपन से ही उसने बड़ी ही तल्लीनता से, आग्रह के साथ पंडितों से शास्त्र, साहित्य, गान, नृत्य आदि कलाएँ सीखीं। योद्धाओं से अस्त्र, शस्त्र व गदा चलाने की विद्या पायी। अपनी शक्ति तथा बल पर उसे पूरा विश्वास हो गया। उसका विश्वास सीमाओं को लाँघकर जब जाने लगा, तब उसके पिता ने उससे कहा ''क्या तुमने विजयनगर के निवासी प्रताप के बारे में कुछ नहीं सुना? उसने भी समस्त विद्याएँ सीखीं और उनमें अग्रगण्य कहलाया गया।''

पिता की बातों से प्रेरित विमल ने निर्णय लिया कि मैं विजयनगर जाऊँगा और उससे लड़ूँगा। विजयनगर पहुँचने पर उसकी मुलाक़ात एक मल्लयोद्धा से हुई। जब मल्लयोद्धा को विमल का मनोभाव मालूम हुआ तो उसने उसे चुनौती देते हुए कहा ''अब तक चार बार मैंने विमल से मल्ल युद्ध किया और चारों बार हार गया। पर मैंने इस युद्ध में, मल्ल-युद्ध की अनेकों वारीकियाँ सीखीं। पहले मुझे हरावो, फिर प्रताप से लड़ो।''

विमल और मल्ल-योद्धा में होड़ हुई। मल्ल-योद्धा ने उसे आसानी से हरा दिया। विमल उसका शिष्य बना और उससे उस युद्ध-संबंधी कई गुर सीखे। चार ही दिनों में मल्ल-योद्धा को हरा दिया। योद्धा ने विमल की प्रशंसा करते हुए कहा ''तुम अवश्य ही प्रताप को हरा सकते हो।''

चार दिनों के बाद विमल ने, प्रताप को मल्ल-युद्ध के लिए ललकारा। प्रताप के हाथों वह चित् हो गया। तब प्रताप ने उससे कहा ''तुम हार तो गये, लेकिन इस विद्या की कुछ वारीकियाँ अच्छी तरह से जानते हो। तुम्हारा भविष्य सुनहरा दीखता है। मेरा शिष्य बनो।'' यों उसने प्रताप

को आह्वान दिया।

विमल ने आक्रोश-भरे स्वर में कहा "मेरी ही तरह तुमने भी कई विद्याएँ सीखीं। उनमें से किसी में तुम्हें हराऊँगा और मैं तुम्हारा शिष्य बनूँगा। तब तक तुम्हारा शिष्य बनने का सवाल ही नहीं उठता।" यों कहकर वह चला गया।

विजयनगर में वीरसेन नामक एक योद्धा था। तलवार चलाने में वह बड़ा ही पटु था। हाल ही में वह भी प्रताप के हाथों हार गया। तब से वीरसेन एक ऐसे युवक की तलाश में था, जिसे प्रशिक्षण देकर उससे प्रताप को हराया जाए। उसे जब विमल के बारे में मालूम हुआ तो उसे बुलवाया। तलवार चलाने की उसकी पटुता की परीक्षा की और तृप्त हुआ। कुछ दिनों के प्रशिक्षण के बाद उसने विमल को उससे लड़ने के लिए भेजा तो प्रताप ने उसे आसानी से हरा दिया।

इस प्रकार, विमल जब प्रताप के हाथों दो बार हार गया तो उसे अंदर ही अंदर ग़म खाये जा रहा था। वह सोचने लगा "मैं तो समझता था कि सब विद्याओं में पारंगत हूँ, अग्रगण्य हूँ। किन्तु विजयनगर में मुझसे अधिक शक्तिशाली वीर मौजूद हैं। उनके शिष्य बनकर, मैंने उनसे मल्ल-युद्ध तथा तलवार चलाने की विद्याएँ सीखीं। मुझे लगता था कि मेरी बराबरी का कोई है ही नहीं। फिर भी आश्चर्य है कि प्रताप ने हर बार मुझे बड़ी आसानी से हराया। विश्वास ही नहीं हो रहा है" इसके बाद भी गदा-युद्ध तथा धनुर्विद्या में वह प्रताप के हाथों हार गया। तब उसे विवश होकर प्रताप से कहना पड़ा "आपकी श्रेष्ठता को मानने से मैंने पहले इनकार कर दिया,

यह मेरी त्रुटि थी। अब मुझे अपने शिष्य के रूप में स्वीकार कीजिये और मुझे धन्य कीजिये।''

उसकी बातों पर प्रताप मुस्कुराता हुआ बोला ''इसमें कोई संदेह नहीं कि तुम महान वीर हो। अवश्य ही तुम्हें अपने शिष्य के रूप में स्वीकार करूँगा। पर, जैसा तुमने पहले कहा, तुम्हें मुझे किसी होड़ में हराना होगा। तभी तुम मेरे शिष्य बन सकते हो।''

विमल, प्रताप के सामने झुक जाना चाहता था, गिड़गिड़ाना चाहता था, किन्तु उसके अहंकार ने उसे ऐसा करने नहीं दिया। उसमें आग्रह अधिक होता गया कि किसी एक विद्या में ही सही, प्रताप को हराऊँ। परंतु उसे लगा कि यह संभव नहीं है। उसकी मनोव्यथा अधिक होती गयी। उसने आत्महत्या करने का निश्चय कर लिया। नगर के समीप की ही नदी के तट पर गया। वहाँ एक योगी के दर्शन हुए। योगी ने आत्महत्या का कारण पूछा, तो विमल ने बिना कुछ छिपाये कारण स्पष्ट बताया।

योगी ने तब कहा ''पुत्र, तुम्हारे मुख पर दिव्यतेजस्विता है। वेदांत विद्या का अभ्यास करो। तुम्हें कोई भी उस विद्या में हरा नहीं पायेगा। प्रताप जैसा शक्तिशाली भी तुम्हारे सामने अपनी हार मान लेगा।''

विमल में पुनः उत्साह भर आया। छे महीनों तक योगी से वेदांतसार को ग्रहण करने के बाद उसने योगी से कहा ''योगिवर, वेदसार अनंत है। अभी-अभी मुझमें ज्ञानोदय हुआ है। प्रताप से मिलने की अनुमति दीजिये।''

'विजयीभव' कहकर विमल को योगी ने आशीर्वाद दिया। विमल नगर लौट आया। प्रताप को अपने आगमन की ख़बर भेजी। तब तक प्रताप को मालूम हो गया था कि विमल ने वेदान्त-ज्ञान पाया है। उसने मन ही मन हँसते हुए विमल को समक्ष मिलने के लिए संदेश भेजा।

नगर भर में यह समाचार आग की तरह फैली कि विमल और प्रताप में वेदांत को लेकर गंभीर चर्चा होनेवाली है। इस विशिष्ट समावेश को देखने के लिए पंडित और साधारण नागरिक भी झुंड के झुंड आये। यद्यपि इसके पहले हर बार विमल, प्रताप के हाथों हारता रहा, पर इस बार विमल के मुखमंडल पर तेजस्विता उमड़ रही

थी। वह सबका आकर्षण-केंद्र बन गया था। हाँ, इसमें कोई संदेह नहीं कि विमल, प्रताप की टक्कर का नहीं, फिर भी लोग चाहते थे कि वह किसी ना किसी दिन विजयी हो। समस्त विद्याओं में वह भी प्रवीण है, इसलिए लोगों का कहना था कि एक बार विजय-माला उसके गले में क्यों ना पहनायी जाए।

सही समय पर सभा का आरंभ हुआ। प्रताप ने शुरू में विमल से कहा "मल्ल-युद्ध में खड्ग-युद्ध में, गदा-युद्ध में, धनुर्विद्या में, शास्त्रों की चर्चाओं में तुम मेरे हाथों बुरी तरह से हार गये हो। अब पहले मुझे बताओ कि वेदांत के विषय में तुमने ऐसा क्या जान लिया। मैं अगर उसका विपुलीकरण कर पाऊँगा, उसकी समीक्षा कर पाऊँगा, अपने तर्क को प्रमाणित कर पाऊँगा, तो समझो, तुम्हारी हार हो गयी। अगर ऐसा नहीं कर पाया तो अपनी हार स्वीकार करूँगा। शर्त मंजूर है?"

विमल ने मुस्कुराकर कहा "आर्य, वेदांत-सार को जानने के बाद मुझे ज्ञात हुआ है कि मैं क्या हूँ। इस संसार में हमें जो मालूम हुआ, वह बहुत ही अल्प है। जो मालूम होना है, वह अनंत है। आप को जितना मालूम है, उसका आधा भाग भी मुझे मालूम नहीं। किन्तु मुझे गर्व था कि मैं सब कुछ जानता हूँ। मेरे गर्व ने मुझे अंधा बना दिया। अज्ञान और अहंकार मुझपर हावी हो गये। मैं अब उनके बंधन से मुक्त हो गया हूँ। मुझे आप शिष्य के रूप में स्वीकार कीजिये

और धन्य कीजिये। आपसे केवल इतनी ही प्रार्थना है कि वेदांतसार के बारे में बताने के लिए मुझपर जोर मत डालिये। वह मुझसे नहीं हो सकता। मैं अशक्त हूँ।"

उसकी बातों को सुनकर प्रताप अचंभे में आ गया। उसने कहा "कितनी ही विद्याओं में निष्णात हूँ। कितने ही बड़े से बड़ों को हराया। समझता था कि वेदांतसार भी मेरे बायें हाथ का खेल है। अहंकार ने मुझे भी अंधा बना दिया। दूसरे की श्रेष्ठता को स्वीकार करने की विनम्रता, वेदान्तसार ने तुम्हें प्रदान किया। किन्तु मैं इस सद्गुण से वंचित हूँ। तुम इस विषय में मुझे अपने शिष्य के रूप में स्वीकार करो। शेष विषयों में मैं तुम्हें अपना शिष्य बनाऊँगा।"

बेताल ने यह कहानी सुनायी और विक्रमार्क से पूछा "राजन्, विमल और प्रताप के व्यवहार से मुझे लगता है कि उनकी बातों में वाक्-चातुर्य है, शब्दों का खेल है, पारस्परिक प्रशंसा है, अलावा इसके और कुछ नहीं। मूल विषय को उन दोनों ने और जटिल बना दिया है। अलावा इसके, उनकी बातों में ठोस कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं होता। शब्दों के जादू में असली विषय को उन्होंने भुला दिया। जिस विषय पर उन्हें चर्चा करनी थी, नहीं की। उल्टे एक दूसरे की महानता का बखान करने लग गये। किसी भी कोण से देखो, प्रताप के सम्मुख विमल का कोई अस्तित्व नहीं। फिर भी, प्रताप तो विमल को अपनी बराबरी का मान रहा है। ज्ञानी कहकर उसकी प्रशंसा के पुल बाँध रहा है। इसका कारण है, विमल के वेदांत-ज्ञान का सही अंदाजा वह लगा नहीं सका। अलावा इसके, समझ में भी नहीं आता कि कौन, किसके हाथों हार गया। बताना कि आख़िर जीत किसकी हुई। विमल जीता या प्रताप। मेरे संदेहों का समाधान जानते हुए भी नहीं दोगे, तो तुम्हारा सिर टुकड़ों में फट जायेगा।"

विक्रमार्क ने उसके संदेहों को दूर करते हुए कहा "दूसरे के ज्ञान व पांडित्य को कोई दूसरा ज्ञानी ही तोल सकता है। वही सही अंदाजा लगा सकता है कि सामनेवाला ज्ञान व पांडित्य में कितना गहरा है। अतः ज्ञानी, सर्वविद्यासंपन्न, पारंगत प्रताप ने, विमल के वेदांत-ज्ञान को सही माप में ही तोला है। इस सत्य को स्वीकार करने में ही वास्तविकता है। दूसरे की श्रेष्ठता को मानने में ही बड़प्पन है। बड़ा ना होते हुए भी, अपने को ही बड़ा मानना, क्षुद्रता है। वह अहंकार व पतन का लक्षण है। प्रताप व विमल की स्पर्धा का अंत वेदांतसार में है। जो भी वेदांतसार जानता है, वह अपने बडप्पन को प्रमाणित करने के लिए, दूसरे से नहीं भिड़ता, वाद-विवाद में नहीं फंसता। वेदांती अपने ज्ञान को दूसरों में बाँटता है। जो स्वयं नहीं जानता, दूसरों से सीखता है। इस कारण, इस सत्य को पहले ही जाननेवाला विमल ही विजेता है।"

इस प्रकार राजा के मौन-भंग में सफल, बेताल शव के साथ ग़ायब हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

आधार : गायत्री की रचना

काव्य-सृष्टि

सौवीर देश का राजा बड़ा ही समर्थ राजा था। उसके शासन-काल में प्रजा बहुत ही सुखी व शांत थी। इसके पहले के किसी भी राजा ने प्रजा को इतना संतुष्ट नहीं रखा। राजा के दरबार में भौतिक, रासायनिक तथा वृक्ष-शास्त्रज्ञों के साथ-साथ, प्रख्यात महाकवि भी थे।

एक दिन राज-सभा में, शास्त्रज्ञों ने सम्मिलित रूप से, उनसे किये गये परिशोधनों के फल समर्पित किये। सभी सभासदों ने उनकी भरपूर प्रशंसा की। उनकी विजय पर अपना हर्ष व्यक्त किया।

उस समय एक आशु कवि ने, उनकी विजयों के कारक राजा की स्तुति में, एक कविता सुनायी। उस कविता में राजा की तुलना बृहस्पति से की गयी।

उस कविता से राजा प्रेरित हुआ। उसके मस्तिष्क में एक विचार जगा। उसे लगा कि जिस प्रकार विज्ञान-क्षेत्र में, सम्मिलित रूप से श्रम करके एक महान कार्य साधा गया, उसी प्रकार विज्ञान-वेत्ता तथा कवि दोनों मिलकर एक महाकाव्य की रचना क्यों नहीं कर सकते? उसने आदेश दिया कि उपस्थित विज्ञान-वेत्ता व कवि दोनों मिलकर उसपर एक काव्य की रचना करें।

राजा का आदेश सुनकर मंत्री स्तंभित रह गया। इस बाबत वह कुछ कहने ही वाला था कि राजा उठकर चला गया।

इसके एक महीने के बाद विज्ञान-वेत्ताओं तथा कवियों से सम्मिलित रूप से रचित काव्य का पठन सभा में होने लगा।

थोड़ी देर बाद सभा में शोरगुल मचा। लगा कि काव्य अटपटा व अशुद्धियाँ से भरा पड़ा है। नवरस नाम मात्र के लिए भी

नहीं हैं। जहाँ श्रृंगार रस होना चाहिये वहाँ रौद्र रस है। शांत की जगह पर रौद्र है। करुणा की जगह पर हास्य है।

थोड़ी देर तक राजा उन कविताओं को सुनता रहा। वह एकदम भड़क उठा और आज्ञा दी कि कविता-पठन बंद किया जाए। वह सभा छोड़कर चला गया।

सायंकाल राजा जब उद्यानवन में घूम रहा था, तब मंत्री वहाँ पहुँचा। मंत्री जैसे ही पास आया, राजा ने उससे पूछा "मंत्री, यह रसाभास कैसा ? हमारे आस्थान में दिग्गज कवि और विज्ञानवेत्ता हैं। जब सबने मिलकर काव्य की सृष्टि की, तो काव्य तो इतना श्रेष्ठ होना चाहिये, जिसे सुनकर बृहस्पति भी वाह-वाही करें, अद्‌भुत कहें। इन सबने मिलकर तो अटपटी, रसहीन व शुष्क कविताएँ रचीं। क्या आप बता सकते हैं कि इसका क्या कारण है और ऐसा क्यों हुआ?"

मंत्री ने कहा "महाप्रभू, उसी दिन कुछ कहनेवाला था, पर आप आस्थान से उठकर चले गये। क्षमा कीजिये। कला व विज्ञान-शास्त्र अलग-अलग हैं। अकेले एक व्यक्ति मात्र महाकाव्य की सृष्टि करता है। कालिदास 'मेघसंदेश' की रचना ना करते तो, उनकी सृष्टि फिर कभी भी, किसी से भी नहीं हो पाती। श्रीहर्ष का 'नैषध' उन्हीं के साथ समाप्त हो जाता तो, हमारी जाति को अपार नष्ट पहुँचता। यह तो किसी दूसरे कवि के बस की बात नहीं। खगोल शास्त्र के बारे में वराहमिहिर ना बताता तो भी किसी और मिहिरराह से तत्संबंधी जानकारी प्राप्त हो सकती थी। एक महाकाव्य उस व्यक्ति की सृजनात्मक शक्ति का परिचायक है, उसकी अद्‌भुत सृष्टि का दृष्टांत है। विज्ञान-शास्त्र में, समर्थ शास्त्रज्ञ सम्मिलित होकर अद्‌भुत फल साध सकते हैं, किन्तु, काव्य-सृष्टि कभी भी सम्मिलित रूप से नहीं की जा सकती।"

मंत्री का दिया हुआ विवरण सुनकर राजा अब समझ गया कि उसके आस्थान के शास्त्रज्ञ तथा कवि क्यों काव्य-सृष्टि में असफल हुए; काव्य-लक्षण उसमें क्यों लुप्त हो गये।

हमारे देश के क़िले - ९

ऐतिहासिक स्मृति-चिह्न

रचना : मीरा उग्रा ❀ चित्र : अरित्रा

सोलहवीं शताब्दी के आरंभ में यूरोपियन हमारे देश में आने लगे। अपने कारखानों की रक्षा के लिए उन्होंने क़िले बनवाये।

मद्रास में स्थित सैंट जार्ज क़िला १६४०-१६५४ के बीच निर्मित हुआ। कूवं नदी जहाँ बंगाली खाड़ी में जा मिलती है, वहाँ इस क़िले का निर्माण हुआ। इस प्रकार, दोनों ओर से सहज रूप से जल द्वारा रक्षा के प्रबंध हुए। तीसरी ओर खाई खोदी गयी। मुगल, महाराष्ट्रीय तथा फ्रांसीसियों ने बहुत बार इसपर आक्रमण किये। १७५८ में फ्रेंच की सेनाओं ने तीनों ओर से इसे घेरा। उनके पास अनेकों तोपें भी थीं। दो महीनों तक सैनिकों को उन्होंने बहुत सताया। इसके बाद अंग्रेज़ सैनिकों को, जब बंगाल से सहायता पहुँची, तब फ्रांसीसी सेनाएँ वहाँ से खदेडी गयीं। इस भागदौड़ में उन्होंने ५२ तोपें तथा घायल सैनिकों को भी वहीं छोड़ दिया। इस अनुभव से लाभ उठाकर अंग्रेजों ने इस क़िले को और मजबूत बनाया। कह सकते हैं कि इसका पुनर्निर्माण ही हो गया। यह पुनर्निर्माण-कार्य पूल्विच गणित शास्त्रज्ञ बार्तोलोम्यू राबिन्स के पर्यवेक्षण में हुआ। दस सालों

प्रथम राजनैतिक व्यंग्य चित्र
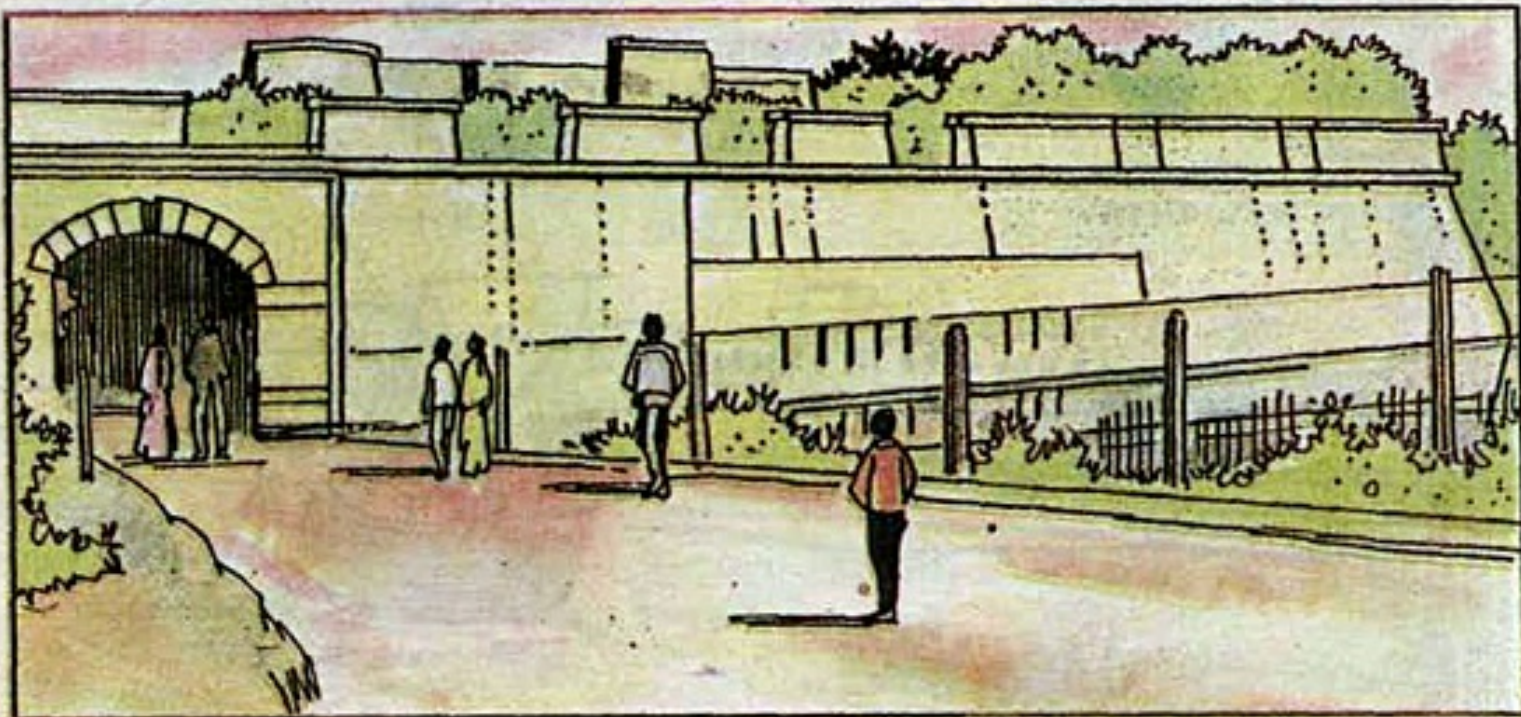
सैंट जार्ज क़िला, मद्रास

के बाद हैदरअली ने मैसूर से, मद्रास की ओर सेनाएँ भेजी।

विलियम क़िले का बुर्ज

१७६१ में, दोनों के बीच समझौता हुआ। इस समझौते के निबंधन हैदरआली ने स्वयं बनाये। जाते-जाते क़िले की दीवार पर एक अमिट व्यंग्य-चित्र भी खिंचवाकर गया। हैदरअली, एक अंग्रेज़ गवर्नर की नाक को पकड़कर खींच रहा है, यही इस व्यंग्य चित्र का विषय था। कहा जा सकता है कि यह चित्र प्रथम राजनैतिक व्यंग्य चित्र था। पाश्चात्य देशों में भी उस समय इस कला का प्रारंभ नहीं हुआ।

इस क़िले में सैंट मेरीस चर्च है। यह हमारे देश में निर्मित अंग्रेज़ों का सर्वप्रथम चर्च है। यह पहले १७५८ में निर्मित हुआ। १७५८ में इसका पुनर्निर्माण हुआ।

इस क़िले के अंदर ही तमिलनाडु का विधान-सभा भवन तथा राज्य सरकार का प्रधान कार्यालय है।

सर्जन गेब्रियल बौटन ईस्ट इंडिया कंपनी में थे। उन्होंने युवरानी जहानारा के शरीर के जले घावों की चिकित्सा की और चंगा किया। युवरानी के पिता शाहजहाँ ने कृतज्ञता-भाव से, कंपनी को बंगाल में स्वच्छंदता से व्यापार चलाने की अनुमति दी। यह हुआ, १६४४ में। थोड़े अर्से के बाद इसी डाक्टर ने, बंगाल के वायसराय युवराजा शुजा के राजपरिवार की एक सदस्या की चिकित्सा की। फलस्वरूप भेंट के रूप में 'कालिकार' के निकट, क़िले के निर्माण की अनुमति दीगयी। इसमें ग्यारह साल लगे। १७०७ में क़िले का निर्माण-कार्य पूर्ण हुआ।

बंगाल प्रांत के विषयों में, अंग्रेज़ों का हस्तक्षेप दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा था, जो युवराजा शिराजुद्दौला को पसंद नहीं था। इसलिए उसने हुक्म दिया कि अनुमति के बिना विलियम क़िले को और मज़बूत ना किया जाए। क़िले की दीवारों पर तोपें रखी ना जाएँ। इससे अंग्रेज़ भड़क उठे। उन्होंने, उसके प्रत्यर्थी को सत्तारूढ़ होने में सहायता पहुँचायी।

इसलिए अपने दादा के बाद जब वह नवाब बना, तब उसने पहला काम

विलियम क़िला, कलकत्ता

शिराजुद्दौला

जो किया, वह था, विलियम क़िले पर हमला। यह हमला हुआ, १७५६, अप्रैल में।

शिराजुद्दौला की सेनाएँ जब समीप पहुँचीं, तब गवर्नर डेक तथा कुछ पदाधिकारी क़िले से भाग गये और जहाज़ में छिप गये। १७५६ जून, बीसवीं तारीख़ को शिराजुद्दौला ने इस क़िले पर अपना आधिपत्य जमाया। उसी दिन शाम को पुरुष, स्त्रीयाँ, बच्चे कुल मिलाकर १४६ अंग्रेज़ क़ैद कर लिये गये। वे सब के सब एक छोटे कमरे में बंद किये गये। सबेरे देखा गया तो उनमें से इक्कीस मात्र जीवित थे। जिस कमरे में यह दुर्घटना घटी, उस कमरे को 'ब्लाक होल आफ़ कलकत्ता' के नाम से पुकारते हैं। नवाब की इस कार्रवाई का तीव्र खंडन अंग्रेज व स्वेदेशियों ने भी किया। फिर भी, आधुनिक इतिहासकारों का कहना है कि शिराजुद्दौला स्वयं इस दुर्घटना के जिम्मेदार नहीं कहे जा सकते।

अलावा इसके, उनका कहना है कि इस कमरे में बंद क़ैदियों तथा मृत व्यक्तियों

ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारी के साथ मुगल बादशाह दुव्वम शा आलम

की संख्या भी सही नहीं है।

एक साल बाद प्लासी युद्ध ने परिस्थितयों को उलट-पलट कर दिया। १७६५, अगस्त, तारीख़ सत्रह को, मुगल बादशाह दुव्वम शा आलम ने फरमाना ज़ारी किया। जिसके मुताबिक़ बंगाल, बिहार व ओरिस्सा में, कर वसूल करने के हक़ ईस्ट इंडिया कंपनी को दिये गये।

राबर्ट क्लैव का दावा था कि पूरा हिन्दुस्तान एक होकर भी आक्रमण करे, तो भी विलियम क़िले को अधीन करना असंभव है। अब यह क़िला भारतीय

राबर्ट क्लैव

सैनिक विभाग के अधीन है।

गंगा, महानंद नदियों के संगम प्रदेश में, ११९८ में गौर क़िले का निर्माण हुआ। यह बंगाल में निर्मित पुराना क़िला है। शिशुपाल गढ़, बाराबति, नौगांग, बोडा, श्यामनगर, सारंगढ़, आदि पूर्वी भारत के मुख्य क़िले हैं। बादामी, दिंडिगल, तिरुचिरापल्ली, टेलिचेरी आदि दक्षिण भारत के मुख्य क़िलों में से हैं। पश्चिम भारत के क़िले हैं, नाभा, हरिपर्वत, कोट, कांग्रा आदि।

मध्यभारत के झान्सी, चंदेरी, बरहनपूर क़िलों का अभूतपूर्व इतिहास है।

हमारे देश के क़िलों की संख्या १४०० से अधिक ही है। महाराष्ट्र में ६५६, मध्यप्रदेश में ३३०, राजस्थान में २५० क़िले हैं। बहुत-से क़िले शिथिल स्थिति में हैं। बहुत से क़िलों की दीवारें गिर गयीं। शिलाओं व मूर्तियों की चोरी हो गयी। सीढ़ियाँ टूट गयीं, पथ छिन्नाभिन्न हो गये। इस स्थिति में इन्हें देखकर हृदय को धक्का लगता है। पूर्व इतिहास के ये स्मृति-चिह्न है। इन्हें सुरक्षित रखने की जिम्मेदारी हमपर है।

तुम्हारी क़सम

अंबर को झूठ कहने की बड़ी बुरी आदत है। जब सबने उसकी बातों का विश्वास करना छोड़ दिया तो क़समें खाने लगा। उस गाँव के बहुत से लोगों का विश्वास है कि क़समें हानियाँ पहुँचाती हैं।

एक दिन, जब अंबर पड़ोसी के घर गया, तो दादी अपने पोते को कहानी सुना रही थी। वह कह रही थी कि रामनाथ बिलकुल ही घी की तुरई के समान है।

पोते की समझ में नहीं आया कि घी की तुरई क्या होती है। तो दादी ने उसे समझाया "घी की तुरई वह है, जिसमें अंदर घी नहीं होता। बाहर से वह हरा-भरा दीखता है, पर अंदर से सारहीन है।" रामनाथ का उदाहरण देते हुए दादी ने बताया कि नाम रामनाथ है, किन्तु उसमें राम के कोई लक्षण नहीं हैं। नाम बड़े, दर्शन छोटे।

अंबर ने बीच में दख़ल देते हुए कहा "दादी, कल हमारे घर में घी नहीं था। घी की चार तुरइयाँ ले आया और पिसा तो प्याले भर का घी निकल आया। तुम तो बता रही हो कि घी की तुरई में घी नहीं होता।"

"दादी ने उसे कोसते हुए कहा "तुम्हारी अक़्ल ही टेढ़ी है। जब देखो, झूठ बोलते रहते हो। क्या कहीं घी की तुरई में घी होता है?" तुम्हारी क़सम दादी। मैंने सच ही कहा कहकर वह चला गया।

उस दिन दादी को बुखार आया। दादी अपने ही आप बड़बड़ाती हुई बोली "अंबर ने मेरी क़सम खायी, इसीलिए मैं बीमार पड़ गयी।" दूसरे दिन दादी का बड़ा लड़का रमण, अंबर के घर गया। अंबर घर पर नहीं था, लेकिन चबूतरे पर तीन आदमी उसी के आने की प्रतीक्षा में बैठे थे।

उनमें से एक का नाम था, सोमनाथ। वह भी इसी गाँव का था। एक दिन अंबर ने

सोमनाथ से बाजी लगायी कि सफ़ेद कौवे नहीं होते। सोमनाथ ने ज़ोर दिया कि सफ़ेद कौवे होते है और हैं। अंबर ने दावा किया कि अगर सफ़ेद कौवे हैं तो पहले मैं ही उन्हें पकडूंगा। बाज़ी थी कि जो सफ़ेद कौवे को पहले पकड़के लायेगा, उसे सौ अशर्फियाँ दूसरे को देनी पडेंगीं।

सोमनाथ को, दो दिनों के बाद घर के पिछवाड़े में, कौवे की एक सफ़ेद बच्ची दिखायी पड़ीं। उसे हथेली में लेकर वह अंबर के घर आया। उसने अंबर से मिलकर उसे कौवे की बच्ची दिखायी।

अंबर ने हँसकर बताया "तुमसे पहले ही मैंने बहुत-से सफ़ेद कौवों का देखा है। हमारे गाँव में जितने भी कौवे हैं, सब सफ़ेद हैं। मैंने ही सब पर सफ़ेद रंग पोता है। यह एक बच्ची मुझे नहीं मिली। मुझे दे, इसपर सफ़ेद रंग पोत देता हूँ।"

सोमनाथ नाराज़ होता हुआ बोला "पहले मुझे सौ अशर्फियाँ दे और फिर अपनी कहानियाँ सुनाना।"

इसपर अंबर ने कहा "मैंने तो तुमसे पहले ही कितने ही सफ़ेद कौवों को देखा था। क्या तुमसे मैंने पैसे माँगे?" "सब सरासर झूठ है" सोमनाथ ने कहा।

"यह झूठ नहीं, सच है। तुम्हारी क़सम" अंबर ने क़सम खायी। सोमनाथ उसे गालियाँ देता हुआ चला गया और रास्ते में दलदल में फँस गया। किसी ने उसे उस हालत में देखा तो बाहर निकाला। नहीं तो वह मर ही जाता। झूठी क़सम खायी, इसीलिए उसकी ऐसी बुरी हालत हुई। इसी को लेकर अंबर से क़ैफियत माँगने आया।

चबूतरे पर दूसरा आदमी जो बैठा था, वह था किरण। वह चाहता था कि काली के मंदिर के पास जो स्नेहा रहती है, उससे शादी करूँ। जब उसने इसका ज़िक्र अंबर से किया तो अंबर ने उसकी हँसी उड़ायी और कहा कि उसकी नाक तो चपटी हैं। वह तो सुँदर नहीं दीखती। किरण ने कहा "चपटी नाकवाली ही मुझे पसंद है।"

इसके बाद अंबर स्नेहा के पास गया और

उससे कहा "किरण तुम्हारी नाक को चपटी कहकर सब के सामने तुम्हारी हँसी उड़ा रहा है। तुम्हारे पिता धनवान हैं ना, इसलिए वह तुम्हें चाहने का नाटक कर रहा है। वह तो तुम्हें चाहता ही नहीं। पर, तुम उससे यह ना बताना कि मैंने तुम्हें ये बातें बतायीं।"

स्नेहा ने नाराज़ होकर, किरण से बातें करना छोड़ दिया। स्नेहा के पिता के द्वारा, जब उसे सच मालूम हुआ, तो वह अंबर के पास आया और कहा "तुम्हीं ने स्नेहा के मन में विष घोला है। तुम्हीं उसे मेरे बारे में सच बताओ और मुझसे शादी करने मनावो।"

अंबर ने उसकी क़सम खायी और कहा "मैं कुछ नहीं जानता। मैंने तो उससे बातें ही नहीं कीं।"

इससे थोड़ी देर बाद किरण, लू लगने से बेशेश हो गया। स्नेहा ने उसकी सेवा-शुश्रूषा की। होश में आने के बाद किरण ने, स्नेहा से सच बताया। दोनों के बीच ग़लतफ़हमी दूर हुई। आज वह अंबर से क़ैफ़ियत माँगने, उसी की प्रतीक्षा में चबूतरे पर बैठा है।

चबूतरे पर जो तीसरा आदमी बैठा है, वह है गणपति। उसका आम का अपना बड़ा बाग़ है। अंबर का दावा है कि किसी चोर को, आमों को चुराते हुए उसने देखा। उसने कहा भी कि उसका नाम है दीपक। दीपक ग़रीब किसान है। ईमानदार है। गणपति के बाग़ में जिन आमों की चोरी हुई थी, वे आम दीपक के घर में मिले। गणपति ने उसे खूब मारा-पीटा और आम लेकर चला गया।

इतने में, आम के बाग़ का रखवाला भूषण, दीपक के पास आया और कहा "मालिक के कहने पर ही मैंने सौ आम तोड़े थे। इतने में कोई काम आ पड़ा तो मैंने यह बात अंबर से बतायी। उसने, उन्हें तुम्हारे घर में रखने को कहा। उस समय तुम्हारे घर पर कोई नहीं था। दरवाज़ा खुला था। फलों को तुम्हारे घर में रखा और अंबर को सूचित किया कि यह बात मालिक को बता देना। हुआ यह और पीटे गये तुम। बहुत बुरा हुआ।" दीपक और भूषण दोनों फ़ौरन गणपति के पास गये। उसने अंबर को बुला भेजा। उसने गणपति से कहा

"तुम्हारा कोई पुराना बैर होगा, इसीलिए तुमने दीपक को पीटा होगा। मैंने तो तुमसे कहा ही नहीं था कि दीपक चोर है। तुम्हारी क़सम।"

उस दिन शाम को, गणपति नाले में नहाने गया तो भँवर में फँस गया और बचकर किसी तरह बाहर आ पाया। अब गणपति उसकी प्रतीक्षा में बैठा है। रमण को मिलाकर, कुल चारों अंबर के आने की प्रतीक्षा में हैं। पर अंबर का कोई पता नहीं।

तब रमण ने कहा "उसके आने के आसार नहीं दीखते। चलो, ग्रामाधिकारी के पास चलते हैं और उसकी शिकायत करते है।"

चारों ग्रामाधिकारी के पास गये। उस समय, वहाँ उस देश का राजा, मंत्री सहित उपस्थित है। ग्राम की देखभाल कैसे हो रही है, जानने वे वहाँ आये हुए हैं।

तब वहाँ रमण और बाक़ी तीनों आये। राजा ने उनकी शिकायत सुनी। राजा की आज्ञा पाकर सैनिक तुरंत गये और अंबर को ढूँढ़कर ले आये। राजा ने उससे क़ैफ़ियत माँगी।

अंबर ने फ़ौरन कहा "राजन्, इन सबने मुझसे बदला लेने की ठानी है। मेरे बारे में सब झूठ बता रहे हैं। मैं कुछ नहीं जानता। आपकी क़सम।"

बस, राजा का पेट अचानक ख़राब हो गया। नाराज़ होकर उसने हुक़्म दिया "यह दारुण हत्यारा है। इसे माफ़ करना नहीं चाहिये। तुरंत फाँसी पर लटका दो।" मंत्री ने दख़ल देते हुए कहा "प्रभू, यह हत्यारा है, आपकी इस राय से मैं सहमत हूँ। किन्तु इसको फाँसी पर लटकाने के निर्णय से मैं सहमत नहीं हूँ।"

मंत्री, राजा को थोड़ी दूर ले गया और धीरे से कहा "प्रभु, आपको राजनीति के दाँव-पेंच के बारे में कहने की योग्यता नहीं रखता। आजकल हमारा पड़ोसी राजा हमपर हमला करने की कोशिशों में लगा है। गुप्तचरों ने मुझे इसकी ख़बर दी है। युद्ध हुआ तो जीत अवश्य ही हमारी ही होगी। परंतु, अंबर के होते हुए सेना को क्यों कष्ट दें? उन्हें क्यों नष्ट होने दें? पड़ोसी देश के सब सैनिकों पर उससे

झूठी क़समें खाने देंगे। ज़रूरत पड़ने पर पड़ोसी राजा की भी क़सम खिलवायेंगे। ऐसे वक्त पर अंबर को फाँसी पर लटकाना उचित होगा?''

राजा चिढ़ता हुआ बोला ''मंत्र-तंत्रों से क्या कहीं पेड़ से फल गिरते हैं, पहाड़ टूटते है? अंधविश्वासों से अगर शत्रु को जीत पायेंगे तो सेना की क्या ज़रूरत ? हथियार क्यों ? बल-पराक्रम का क्या स्थान?''

मंत्री हँसकर बोला ''प्रभु, आप ही ने तो कहा था कि यह अंधविश्वास है। अंबर को फाँसी पर लटका रहे हैं, इसी अंधविश्वास के आधार पर ना?''

राजा चकित होता हुआ बोला ''हाँ, तुमने ठीक कहा। मैंने तो अपना विवेक ही खो दिया। पता नहीं, क्यों इतनी आसानी से अंधविश्वास की लपेट में आ गया।''

''आप ही की नहीं राजन्। सब मनुष्यों की यही कमज़ोरी है। दूसरे में खोट निकालने के लिए, बहुत-से लोग अंधविश्वासों का आश्रय लेते हैं। हाँ, अंबर को झूठ बोलने की आदत है, झूठी क़समों के कारण दुर्घटनाएँ घटी हैं। यह तो केवल उनका अंधविश्वास है। जब दूसरों से इस संबंध में घटी घटनाएँ सुनते हैं तो संदेह दृढ़ हो जाता है। उनकी बातों पर विश्वास करने लगते हैं। जब अंबर ने, आपकी क़सम खायी तो आप भी थोड़ी देर के लिए डगमगा गये। अंधविश्वास की घटनाओं को लेकर न्याय-निर्णय लेना भी ग़लत है। ग्रामीणों को ही ऐसे लोगों से निपटना होगा। आप अंबर को छोड़ दीजिये।''

राजा ने वहाँ उपस्थित सबों से मंत्री की राय बतायी और अंबर से कहा ''देखो, तुम्हें इस बार छोड़ रहा हूँ। आगे से झूठी क़समें खायीं, तो तुम्हारी ख़ैर नहीं।''

अंबर ने राजा के पैर छुये और कहा ''आपकी क़सम प्रभू। आगे से आप ही के कहे अनुसार करूँगा।'' कहकर चला गया।

शायद, राजा का अंधविश्वासों से विश्वास उठ गया अथवा अंबर की खायी क़सम झूठी नहीं थी, मालूम नहीं, सच क्या है, राजा की क़सम खाने के बाद भी, राजा को कोई हानि पहुँची।

अनुभवी का मूल्य

शहर की प्रधान गली में मुकुंद और गोविंद ने मिलकर चप्पल की दूकान खोली। दूकान के प्रारंभोत्सव के दिन मुकुंद ने गोविंद से कहा ''दूकान में हमारे पास काम करने के लिए एक नौकर की ज़रूरत है। इसलिए मैंने कृष्ण नामक एक लड़के को कल से काम पर आने को कहा है। इस लड़के को मैं पहले ही से जानता हूँ। मैंने उससे कहा भी था कि उसका वेतन होगा, दो सौ रुपये।''

गोविंद ने कहा ''ऐसी बात है क्या? मैंने भी यही काम किया। प्रकाश नाम के एक लड़के को काम पर रख लिया है। वह अक़्लमंद है। साथ ही, वह ऐसी दूकान में काम कर चुका है। अनुभव रखता है। इसलिए उसे महीने में तीन सौ रुपयों का वेतन देने का भी वचन दे चुका।'' उसने और कहा ''ऐसे लड़के काम के नहीं होते, जो अनुभव-शून्य होते हैं। अनुभव होने पर ही वह जान पायेगा कि ग्राहकों से कैसे निपटना है। अलावा इसके, अनुभवी ही जान पाता है कि कौन ग्राहक झूठा है और कौन सच्चा। मेरी बात मानो और उस अनुभवी लड़के को ही नौकरी पर रख लो।''

मुकुंद ने कहा ''एक-दूसरे की जानकारी के बिना हमने यह काम कर दिया। कम वेतन लेनेवाले उस कृष्ण को ही काम पर लेंगे। हाँ, वह अनुभव नहीं रखता, परंतु काम में बहुत ही चुस्त है। विषय तक्षण ही समझ जाता है और फटाक् से काम पूरा कर देता है। दूकान में जो ग्राहक आते है, उन्हें केवल चप्पल दिखाना है और उनके पैरों के पास रखना भर है। इसके लिए अक़्लमंदी या अनुभव की कोई ज़रूरत नहीं। कल प्रकाश जब आयेगा, मैं उसे समझा दूँगा। तुम बेफ़िक्र रहो।''

ता.म. किराणे

"तो, एक काम करते हैं। दोनों को काम पर लगायेंगे। एक महीने के अंदर मालूम हो जायेगा कि इन दोनों में से कौन योग्य है। अयोग्य को भेज देंगे। योग्य को सौ रूपये ज़्यादा भी दे दें तो, कोई फरक़ नहीं पड़ेगा।" गोविन्द ने कहा।

मुकुंद ने गोविंद की बात मान ली। दूसरे दिन कृष्ण और प्रकाश दोनों काम पर आये।

हफ़्ते के बाद एक अमीर ने दुकान में आकर क़ीमती चप्पल खरीदे। उनकी क़ीमत थी, पचास रुपये। जब उसने जेब से रुपये निकाले, तब बीस रुपयों की कमी पड़ गयी।

धनवान ने अपना रोब जमाते हुए मुकुंद से कहा "मेरी जेब में आवश्यक धन नहीं है। दूकान के ही पास मेरी जो घोड़ा-गाड़ी है, उसमें चप्पल रखवा दीजिये। घर पहुँचते ही, बाक़ी बीस रुपयें नौकर को देकर भिजवा दूँगा।"

मुकुंद उधेड़बुन में पड़ गया। निर्णय नहीं कर पा रहा था कि क्या करूँ ? उस धनवान को वह जानता नहीं था। मालूम नहीं, वह रुपये भिजवायेगा या नहीं। अगर ना कह दिया तो शायद वह बिगड़ जाये।

इतने में प्रकाश ने धनवान से कहा "आप गाड़ी में जाकर बैठ जाइये। मैं चप्पल लाकर आपकी गाड़ी में रख दूँगा।"

इसके बाद प्रकाश चप्पल ले गया और गाड़ी में रख आया। तब मुकुंद ने उससे पूछा "वह आदमी कौन है? तुम उसे कैसे जानते हो? क्या भरोसा कि वह पैसे भेजेगा या नहीं। मुझसे पूछे बिना ही चप्पल गाड़ी में कैसे रख आये ?"

"उसके बारे में आप जितना जानते हैं, उतना ही मैं भी जानता हूँ" प्रकाश ने कहा।

यह सुनते ही मुकुंद आग-बबूला होता हुआ बोला "जानते तक नही हो कि वह कौन है और तुमने उसे चप्पल सौंप दिये। तुम्हारा विश्वास करके मैंने उसे कर्ज़ दिया। अगर उसने कर्ज़ नहीं चुकाया तो वह रक़म

तुम्हारे वेतन से काट लूँगा । बाद तुम्हें दूकान से बाहर कर दूँगा ।''

किसी ज़रूरी काम पर गोविंद बाहर गया हुआ था । अभी-अभी दूकान में आया तो मुकुंद की बातों से मालूम हुआ कि वह क्यों चिल्ला रहा है और बौखला रहा है । वह भी प्रकाश पर टूट पड़ा ''तुमने बिना जाने ही क्यों उस आदमी का समर्थन किया, हामी भरी । पहले यह बताओ कि यहाँ काम पर आने का तुम्हारा क्या उद्देश्य है? इसके पीछे तुम्हारी क्या चाल है?''

प्रकाश ने विनयपूर्वक कहा ''उस आदमी से हमें बीस रुपये मिलने हैं। वह जो चप्पल ले गया है, वे ही उसकी ज़मानत हैं। मैंने जो चप्पल उसे दिये, दोनों एक ही पाँव के हैं । हो सकता है, वह हमारा कर्ज़ ना चुकाये, पर चप्पल बदलने के लिए ही सही, उसे यहाँ तो आना ही पड़ेगा। तब हमें जो बीस रुपये देने हैं, देने ही पड़ेंगे ।''

उस दिन शाम को वही हुआ, जैसा प्रकाश ने कहा । धनवान गाड़ी से उतरा और जल्दी-जल्दी अंदर आते हुए, मुकुंद और गोविंद से कहा ''मालूम नहीं, तुम्हारा कर्मचारी नासमझ है या ऐसे कामों के लिए नया है। एक ही पैर के दोनों चप्पल लाकर गाड़ी में रखा ।'' चिढ़ते हुए उसने कहा ।

तुरंत मुकुंद ने कहा ''माफ़ कीजिये । ग़लती हो गयी ।'' फिर उसने प्रकाश से कहा ''अरे प्रकाश, फलों की दूकान की आदत अभी तुम्हारी छूटी नहीं । वहाँ के ग्राहकों को, छोटे और बड़े फलों को मिलाकर एक ही टोकरी में रखते जाते हो और यहाँ? यहाँ एक ही पैर के चप्पलों को ग्राहकों को बेच रहे हो ।'' नाराज़ी का नाटक करते हुए उसने कहा ।

धनवान, उसकी बातों पर खुश होता हुआ बाक़ी रक़म बीस रुपये देकर, मुकुंद के दिये चप्पल लेकर वहाँ से निकल गया। मुकुंद ने प्रकाश की प्रशंसा करते हुए गोविंद से कहा ''अब मेरी समझ में आया कि अनुभवी का कितना मूल्य है । उससे क्या लाभ पहुँचता है। प्रकाश को ही हम नौकरी पर रख लेंगे ।''

विश्वकर्मा से निर्मित इंद्रप्रस्थ नगर को अपनी राजधानी बनाकर, पाँडव अपने अर्द्धराज्य का पालन, धर्मबद्ध होकर करने लगे। राज्य दिन-ब-दिन वृद्धि करता गया।

उस समय नारद मुनि, धर्मराज से मिलने अकस्मात् आ पहुँचे। धर्मराज ने अपने भाइयों सहित उनका स्वागत किया। उन्हें आसन पर बिठाया तथा उन्हें साष्टांग नमस्कार किया। अंत:पुर से द्रौपदी आयी और विनयपूर्वक प्रणाम किया। नारदमुनि ने उसे आशीर्वाद दिया। फिर उन्होंने धर्मराज से कहा ''द्रौपदी आज पाँचों की एकमात्र धर्मपत्नी है। उसके कारण आपमें अंत:कलह ना हो, इसके लिए आवश्यक है कि आप कुछ नियमों का पालन करें। इससे आपमें एकता और दृढ़ होगी। ऐसे विषयों में निकटतम व्यक्तियों में भी शत्रुता उत्पन्न हो सकती है।'' उन्होंने उदाहरणस्वरूप सुँदोपसुँद की कथा बतायी।

''राक्षस हिरण्यकश्यप के वंश में निकुँभ का जन्म हुआ। सुँदोपसुँद उसी के पुत्र थे। वे सदा एक साथ रहते थे। एक दूसरे से कभी भी अलग नहीं होते थे। सदा साथ-साथ घूमते थे। उनका पारस्परिक प्रेम बहुत ही घना था। वे तीनों लोकों पर विजय प्राप्त करने की इच्छा रखते थे। इसके लिए तपोशक्ति की नितांत आवश्यकता थी। उसे पाने के लिए विंध्य पर्वत के निर्जन अरण्य में आये। वहाँ उन्होंने घोर तपस्या की। उनकी तपस्या के ताप से विंध्य पर्वत की गुफ़ाओं में

अर्जुन की तीर्थयात्राएँ

अग्नि उत्पन्न हुई। अरण्य भर अग्नि-ज्वालाएँ व्याप्त हुई।

उनकी घोर तपस्या को देखकर देवता भयभीत हो गये। उन्होंने उनकी तपस्या का भंग करने का निश्चय किया। उन्होंने भाइयों में भ्रम उत्पन्न कर दिया मानों उनके सम्मुख रत्नों की राशियाँ और अतिमनोहर सुँदरियाँ हैं। किन्तु सुँदोपसुँद पर इस भ्रम का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वे स्थिर रहे। जब देवता असफल हुए तब उन्होंने एक और भ्रम की सृष्टि की। फलस्वरूप सुँदोपसुँद को लगा कि कितनी ही माताओं, पत्नियों तथा पुत्रों को राक्षस पीड़ा पहुँचा रहे हैं; उन्हें नाना प्रकार की यातनाएँ दे रहे हैं। सुँदोपसुँद, देवताओं के इस भ्रम से भी विचलित नहीं हुए। तब ब्रह्मा प्रत्यक्ष हुए। उन्होंने, उन्हें सब प्रकार के अस्त्र-शस्त्र, अतुलनीय बल-पराक्रम तथा तीनों लोकों पर विजय पाने के वर दिये। उन्होंने ब्रह्मा से अमर होने का वर माँगा। परंतु, ब्रह्मा ने ऐसा वर देने से अस्वीकार किया। किन्तु उन्होंने ऐसा वर दिया, जिससे वे किसी दूसरे के हाथों नहीं मरेंगे। एक दूसरे को मारने का प्रश्न ही नहीं उठता। अतः उन्होंने समझा कि हम अमर ही हैं। वास्तव में, उन्होंने कल्पना ही नहीं की कि किसी कारण को लेकर आपस में बैर उत्पन्न होने की संभावना है।

इस प्रकार समस्त वरों से सुसज्जित सुँदोपसुँद ने सेना इकट्ठी की और इंद्रलोक पर धावा बोल दिया। वे विजयी हुए। इस प्रकार

पाताल लोक को भी हस्तगत किया। आख़िर भूलोक को अपने अत्याचारों से भयभीत करने लगे। तब ब्रह्मा ने विश्वकर्मा को बुलाया और उसे आज्ञा दी कि त्रिलोक सुँदरी की सृष्टि हो। उसने तिलोत्तमा नामक एक अद्‌भुत सुँदरी की सृष्टि की। वह सुँदोपसुँद के पास भेजी गयी। नदी के किनारे, जब वह फूल बटोर रही थी तब दोनों भाइयों ने उसे देखा। वे उसकी सुँदरता पर रीझ गये। उन्होंने उससे विवाह रचने का निश्चय किया। दोनों ने उससे पूछा कि हम दोनों में से तुम किसकी पत्नी बनना चाहती हो? तब उसने कहा कि आप दोनों में से जो बलशाली है, उसकी पत्नी बनूँगी। अब उनके लिए यह आवश्यक हो गया कि वे आपस में एक दूसरे से लड़े और प्रमाणित करें कि दोनों में से कौन बलशाली है। फलस्वरूप उन्होंने एक दूसरे को मार ड़ाला।''

नारद ने पाँडवों को सुँदोपसुँद की उक्त कथा सुनायी और कहा ''आप ऐसे नियम बना लीजिये, जिससे आप एक दूसरे से ना लड़े, ऐसा अवसर ही ना आये। मैं जो भी कह रहा हूँ, आपकी भलाई के लिए ही कह रहा हूँ।''

नारद को साक्षी बनाकर पाँडवों ने एक नियम का दृढ़ीकरण किया। उसके अनुसार, द्रौपदी एक-एक साल, एक-एक पति के साथ रहेगी। जिसके घर में वह रहेगी, उस अवधि में दूसरे को उसके घर जाना नहीं चाहिये। अगर, भूल से ऐसा हुआ तो बारह महीनों तक उसे ब्रह्मचारी बनकर रहना होगा, वनवास करना होगा और तीर्थयात्राओं पर जाना होगा। पाँडवों के निर्णय पर नारद प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा ''इस प्रकार का प्रबंध हो, तो आप में कोई भी फूट नहीं डाल सकता। आप एक होकर सदा रह पायेंगे। आपकी एकता श्लाघनीय होगी।'' यों कहकर वे चले गये।

द्रौपदी नियम के अनुसार साल भर एक ही पति के यहाँ रहने लगी। समय यों बीतता गया।

एक दिन एंक ब्राह्मण धर्मराज के प्रासाद के बाहर खड़े होकर आक्रंदन करने लगा।

निर्धारित नियम का स्मरण आया। अब द्रौपदी धर्मराज की पत्नी बनकर उसी के साथ रह रही है। इस स्थिति में उसका, उनके घर में प्रवेश करना नियम का उल्लंघन करना होगा। नियम-भंग के भय से वह धनुष व बाण ले आने में विलंब करेगा तो कार्य-भंग होगा। अर्जुन ने सोचा कि नियम-भंग से दंड मिलेगा तो वह दंड भुगता जा सकता है, किन्तु कार्य-भंग अपराध है। धर्मराज और द्रौपदी, अंत:पुर में जब आसीन थे, तब अर्जुन अंदर आया। धर्मराज की अनुमति लेकर उसने धनुष-बाण लिये। ब्राह्मणों को लेकर चोरों को पकड़ने गया। आख़िर वह अपने कार्य में सफल हुआ। उसने गायें ब्राह्मण के सुपुर्द कीं।

अर्जुन ने यह देखा और उससे पूछा "महाशय, आप रो क्यों रहे हैं?"

"पुत्र, आप जैसे धर्मात्माओं के होते हुए भी, मेरी गायों को चोर ले गये। मेरी सहायता करनेवाला कोई नहीं है। मेरी प्रार्थना को हर कोई अनसुनी कर रहा है। गायों के चले जाने से मेरी धार्मिक क्रियाएँ बंद हो गयीं। कृपया मुझे मेरी गायें लौटाइये।" ब्राह्मण ने बड़ी दीनता से विनती की।

"तुम्हारी गायें तुम्हें दिलाऊँगा। बताइये कि वे चोर किस तरफ़ गये? मुझे राह दिखाने के लिए आप भी मेरे साथ आइये।" कहता हुआ, अर्जुन धनुष व बाण लेने धर्मराज के घर के अंदर जाने लगा। इतने में अर्जुन को

अर्जुन की इस वीरोचित उदारता से सब प्रसन्न हुए। उसने सबको विनयपूर्वक प्रणाम किया और फिर धर्मराज के पास आया। उसने धर्मराज से कहा "नियम का उल्लंघन करके मैं आपके कक्ष में आया था, जहाँ आप दोनों थे। अतः एक साल तक मैं वनवास करूँगा और तीर्थयात्राओं पर जाऊँगा। अनुमति प्रदान कीजिये।"

अर्जुन की बातों पर धर्मराज दुखी होता हुआ बोला "अर्जुन, जब बड़े अपनी पत्नी के साथ हों, तब छोटों का वहाँ आना अपराध नहीं है। उनका प्रवेश निषिद्ध नहीं है। अलावा इसके, तुम उस ब्राह्मण की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आये थे। इससे शुभ ही

हुआ। इसमें तुम्हारा कोई स्वार्थ नहीं है। उपकार की प्रवृत्ति से प्रेरित होकर इस कक्ष में तुमने प्रवेश किया है। इसमें तुम्हारी कोई त्रुटि नहीं है। मेरे प्रति तुम्हारे हृदय में आदर की भावना हो, तो ऐसे विचारों को त्यजो।''

तब अर्जुन ने कहा ''किसी से भूल हो जाए, तो हम उसे दंड देते हैं। हम से ही भूल हो जाए और किसी बहाने का आसरा लेकर दंड से बचने का प्रयत्न करें तो मेरी दृष्टि में अवश्य ही यह अपराध है, अक्षम्य है। उस दंड को भुगतना ही हमारा धर्म है। मुझे रोकिये मत। मैंने निर्णय कर लिया है कि तीर्थयात्रा पर जाकर ही रहूँगा।''

धर्मराज को 'हाँ' कहना ही पड़ा। अर्जुन ने वनवास जाने के लिए आवश्यक तैयारियाँ कर लीं। उसके साथ, अनेकों ब्राह्मण तथा पुण्य-कथाएँ सुनाने के लिए पुराण-पंडित निकले। उनके साथ अर्जुन बहुत से तीर्थस्थानों पर गया। कुछ समय बाद वह गंगाद्वार पर पहुँचा।

वहाँ अनेकों मुनि, तपस्वी गंगा में स्नान कर रहे थे। अग्नि में आहुतियाँ दे रहे थे। यह देखकर अर्जुन ने गंगा में स्नान करने का निश्चय किया। वह नदी में उतरा।

उस समय उलूपि नामक एक नागकन्या, अर्जुन की सुंदरता को देखकर उसपर मुग्ध हुई। पानी में ही उसे पकड़ लिया और नागलोक ले गयी। वह उसे लेकर एक दिव्य

भवन में पहुँची।

अर्जुन ने उसे देखकर आश्चर्य से पूछा ''यह कैसा साहस? बताओ कि तुम कौन हो, किसकी पुत्री हो, यह कौन-सा देश है?''

''पतिदेव, ऐरावत कुल के कौरव्य नाम के नागराज की पुत्री हूँ। मेरा नाम उलूपि हूँ। कामदेव जैसे मनोमुग्धकारी लगनेवाले आपको देखकर मेरे हृदय में प्रेम अंकुरित हुआ। नाग जाति की शक्तियों का उपयोग करके आपको यहाँ ले आयी। मेरी इच्छा पूरी कीजिये और मुझे संतान दीजिये।''

''देखो उलूपि, कारणवश मैं ब्रह्मचर्य का पालन कर रहा हूँ। तीर्थ यात्राएँ करके अपना समय व्यतीत कर रहा हूँ। मुझसे व्रतभंग

करने की तुम्हारी प्रार्थना अवांछनीय है, अधर्म है। इससे मुझे पाप लगेगा।'' अर्जुन ने उसे समझाने का प्रयत्न किया।

परंतु उलूपि इस विषय में समझौता करने के लिए बिलकुल तैयार नहीं थी। उसने कहा ''द्रौपदी के विषय में आप भाइयों ने जिस नियम के पालन का निर्णय लिया, उससे मैं परिचित हूँ। अपने को ब्रह्मचारी कहकर मुझे अपनाने से अस्वीकार करेंगे तो मैं जलकर राख हो जाऊँगी। प्राण की रक्षा करना पवित्र धर्म है। उससे उत्तम कोई पुण्य नहीं होता। मेरी इच्छा पूरी कीजिये'' कहकर उसने अर्जुन के पैरों को अपना पूरा बल लगाकर पकड़ लिया। अर्जुन ने उपस्थित स्थिति के बारे में गंभीर रूप से सोचा-विचारा। उसने उलूपि की इच्छा की पूर्ति करने की ठानी। रात उसी के साथ बितायी। दूसरे दिन प्रातःकाल उलूपि स्वयं उसे गंगाद्वार पर ले आयी। उसने अर्जुन को वर दिया कि किसी भी जल-जंतु से उसे हानि नहीं पहुँचेगी। वह वापस चली गयी। तदनंतर वह माँ बनी। उसके पुत्र का नाम था ऐरावंत।

गंगाद्वार को छोड़ने के बाद अर्जुन अनेकों तीर्थस्थानों में गया। निकलने के तेरहवें महीने में वह मणिपुर नामक नगर में पहुँचा। चित्रवाहन उस नगर का राजा था। चित्रांगदा नामक उसकी एक सुंदर पुत्री थी। उसे देखते ही अर्जुन उसे चाहने लगा। उसने उसके पिता से चित्रांगदा का हाथ माँगा।

चित्रांगद ने कहा ''मुझे इससे बढ़कर और क्या चाहिये। परंतु, एक बात तुमसे कहनी है। हमारे वंश में पुत्र ही पैदा होते आये हैं। किन्तु मुझे पुत्री हुई। अतः पैदा होनेवाले इसके पुत्र को, अपना पुत्र बनाकर पालूँगा। मेरी इस शर्त को मानोगे तो अवश्य ही अपनी पुत्री का विवाह तुमसे करूँगा।''

अर्जुन ने अपनी सम्मति दी। चित्रांगदा से विवाह किया। उसने तीन दिन और तीन रातें उसके साथ बितायीं। फिर अपने साथ जो ब्राह्मण थे, उन्हें लेकर दक्षिणी समुद्री तट पर पहुँचा।

(सशेष)

'चन्दामामा' की ख़बरें

अद्भुत

एक ही प्रसव में जुडवें बच्चों का पैदा होना साधारण विषय है। कहते हैं कि ८२ प्रसवों में एक प्रसव ऐसा हो सकता है। इसी प्रकार ६,४०० प्रसवों में तीन बच्चे एक साथ पैदा हो सकते हैं। चार बच्चों

का एक साथ पैदा होना ५१२,००० प्रसवों में हो सकता है। एक ही प्रसव में पाँच बच्चों का पैदा होना ४१,०००,००० संभव है। पिछले जून में ईजप्ट की एक स्त्री ने एक साथ छे बच्चों को जन्म दिया। यह विरले ही होता है। याने यह ३,३००,०००,००० प्रसवों में एक बार संभव है। इस स्त्री के चार बेटे हुए और दो बेटियाँ हुई। इनका वज़न ८६० ग्राम से १.७५ तक था। शस्त्र-चिकित्सा द्वारा ये शिशु बाहर निकाले गये। डाक्टरों की शुभ-कामना है कि ये शिशु जीवित हों और बड़े बनकर स्वस्थ जीवन बितावें।

कौन, कौन

चार साल पहले केरल के आर.एस. पिल्लै व वत्सला दंपति के एक साथ तीन बच्चे हुए। उनके नाम हैं, नीना, नीतु, निम्मी। उन बहनों को हाल ही में पाठशाला में भर्ती किया। लंबाई में, रूपरेखाओं में, रंग में तीनों एक समान दिखते हैं। इस कारण पाठशाला के अध्यापक कुछ हफ़्तों तक असमंजसता में पड़े रहे कि कौन, कौन है। आख़िर उनकी व्यवहार शैली से जब वे परिचित हुए, तब उन्हें मालूम पड़ा कि कौन, कौन हैं। घर में उन्हें उनके असली नाम से पुकारते नहीं है। मालू, मीनू, मोलू के नाम से प्यार से पुकारते हैं। नाम तो सुंदर हैं, परंतु समस्या दूसरों के लिए है। किसे किस नाम से पुकारा जाए?

सब वकील

एक परिवार के चार भाइयों ने और एक बहन ने वकालत का पेशा अपनाया। केरल प्रांत के वेलू (८०) व जानकी (७०) नाम के दंपति की ये संतान हैं। इनके नाम है, रामचंद्रन, रामनाथन, रामभद्रन, रामराजन, रमादेवी। बड़ा बेटा रामचंद्रन १९७१ में वकालत में स्नातक बना। अब उसकी उम्र है ४५ साल। वह तिरुचूर में वकालत कर रहा है। रामभद्रन भी वहीं वकालत कर रहा है। रामनाथन कुन्नमकोल में, रामराजन भी पारापूर में वकालत कर रहे हैं। रमादेवी महाराष्ट्र के नासिक शहर में वकालत कर रही है। उसका पति अशोकन भी वकील ही है। रामभद्रन की पत्नी भी निकट भविष्य में वकील बननेवाली है। वृद्ध माता-पिता इस बात पर संतुष्ट हैं कि आज तक हमें अदालत में जाने की नौबत नहीं आयी।

भेंडी

ब्रिटिश नाविक कप्तान कुक १७६१ में पसिफिक महासमुद्र के टाहिटी द्वीप पर पहुँचा। वहाँ के मंदिरों के पास के आकर्षणीय पुष्पों से लदे कुछ पेड़ों को देखा। उसने उसका नाम रखा, 'थेप्सिनिया'। ग्रीक भाषा में इसका अर्थ है दिव्य। हमारे देश में, विशेषतया दक्षिण भारत में ये पेड़ कहीं-कहीं दिखायी देते हैं। इन पेड़ों को अंग्रेज़ी में कहते है - पोर्षिया अथवा टुलीप। इसकी शाखायें घनी होती है। देखने में छतरी जैसी लगती है। इसलिए इसे 'अंबरिल्ला ट्रीस' भी कहते हैं। इस भेंडी पेडों को तमिल में 'पू अरसू' कन्नड में 'अरसि' मलयालम में 'चंदामरा' तेलुगु में 'गंगरावि' कहते हैं। हिन्दी, मराठी, गुजराती भाषाओं में 'भेंडी' के नाम से यह पुकारा जाता है। बंगाली व पंजाबी में 'पराश' कहते हैं।

वृक्ष-शास्त्र में इसे कहते है 'थेस्पियापपालनी'। इसके पत्ते चिकने होते है। ये कोमल होते हैं। दिल के आकार में होते हैं। पत्ते झड़ भी जाएँ, पर पेड़ तो सदा हरे दीखते हैं।

फूल पीले रंग में तेजोमय लगते हैं। इसके अंदर का भाग लाल रंग का होता है। क्रमशः यह पक्के लाल रंग में परिवर्तित होता है। फल हरे और गोल होते हैं। पक्का होकर जब पकने लगते हैं, तब काले रंग में परिवर्तित होते हैं। ऐसे तो साल भर पेड़ में फूल लगते हैं, परंतु शीतकाल में अधिकाधिक फूल दीखेंगे।

इसकी लकड़ी काफ़ी मज़बूत है। चूंकि पानी को सहने की शक्ति इसकी लकड़ी में अधिकाधिक है इसलिए इसका उपयोग नावें तथा बंदरगाहों में आवश्यक सामग्री बनाने के कामों में होता है। अलावा इसके, पहियाँ, पेटियाँ आदि बनाने के काम में इसका उपयायोग होता है। भेंडी पेड़ के पत्तों, फूलों, फलों, जड़ों, छिलकों में औषधियों के गुण हैं।

हमारे देश के ऋषि : ८

च्यवन

भृगु महर्षि की धर्मपत्नी आश्रम में अकेली थीं। उस समय एक राक्षस उनका अपहरण करने आया। उस समय वे गर्भिणी थीं। पेट में जो बच्चा था, वह क्रोधित होकर बाहर आया और राक्षस पर टूट पड़ा। राक्षस इस अप्रत्याशित घटना से भयभीत होकर भाग गया। नव मास के पूर्व ही जन्मे इस बच्चे का नाम रखा गया च्यवन।

च्यवन बड़े हुए। वे नर्मदा नदी के तट पर आसीन होकर ध्यान में मग्न हो गये। उन्हें चारों ओर से बाँबियाँ घिरती गयीं। कभी-कभी वे आँख खोलते मात्र थे, किन्तु शनैः शनैः चेतना घटती गयी।

एक दिन राजा शर्याति अपने परिवार के साथ उस मार्ग से गुज़र रहा था। एक सरोवर के पास वह रुक गया। बालक राजकुमार, उस बाँबी से दीखनेवाली चमकती आँखों को देखकर, छोटे-छोटे पत्थर उस पर फेंकने लगे। क्रोधित मुनि ने बालकों के माता-पिता को शाप दिया। फलस्वरूप उन्होंने अपना स्वास्थ्य खोया। राजा ने मुनि से क्षमा की भिक्षा माँगी। मुनि शांत हुए और अपना शाप लौटा लिया। किन्तु मुनि ने माँग की कि उनकी पुत्री राजकुमारी सुकन्या से उसका विवाह संपन्न हो। राजा उधेड़बुन में पड़ गया कि कैसे एक वृद्ध मुनि से पुत्री का विवाह किया जाए? परंतु सुकन्या ने मुनि के प्रस्ताव को स्वीकार किया और उनसे शादी की।

इस घटना के चंद दिनों के बाद वैद्य अश्विनी देवता च्यवन के आश्रम में अतिथि बनकर आये। दंपतियों की उम्र के भेद को देखते हुए उन्होंने च्यवन को यौवन प्रसादने का निश्चय किया। उन्होंने शर्त रखी कि इसके लिए सुकन्या को एक परीक्षा देनी होगी। सुकन्या ने शर्त मान ली।

अश्विनी देवता तथा च्यवन समीप ही के सरोवर में डूबे और ऊपर आये। च्यवन को यौवन प्राप्त हुआ। परंतु, च्यवन तथा अश्विनी देवता रूप व सौंदर्य में एक समान लगने लगे।

सुकन्या ने तीनों में से अपने पति को पहचान लिया। परीक्षा में सफल सुकन्या को आशीर्वाद देकर वे चले गये।

च्यवन से रचित प्रार्थना-श्लोकों का अब भी पठन होता है।

क्या तुम जानते हो ?

१. अमेरीका के अध्यक्ष के निवास-स्थल को 'वैट हौस' कहते हैं ? इसका यह नाम कैसे पड़ा?
२. टिप्पु सुल्तान की राजधानी क्या थी?
३. 'डास कापिटल' (पूंजी) के रचयिता कौन हैं?
४. 'सबरमती साधु' कहकर कौन पुकारे जाते हैं?
५. जीब्राओं के विशिष्ट लक्षण क्या हैं ?
६. होल्करों ने कहाँ से अपना शासन चलाया?
७. रोडीसिया का वर्तमान नाम क्या है ?
८. रवींद्रनाथ टागौर से रचित एक ग्रंथ के कारण उन्हें नोबेल पुरस्कार मिला। उस ग्रंथ का क्या नाम है ?
९. प्रथम 'रोबोट' की सृष्टि कब हुई?
१०. 'आर्यसमाज' के स्थापक कौन हैं ?
११. अतिप्राचीन क्रीडा का क्या नाम है?
१२. कोलार सोने की खानें किस राज्य में हैं ?
१३. चाकलेट तैयार करनेवाली एक संस्था ने अपने लिए एक गाँव का निर्माण किया। वह गाँव कहाँ है ?
१४. 'गीतगोविंद' के रचयिता कौन हैं?
१५. 'डैनमेट' के आविष्कारक कौन हैं?
१६. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की प्रथम महिला अध्यक्षा कौन थी?

उत्तर

१. आग लग जाने से जो नुकसान पहुंचा, उसे ढकने के लिए लगाये गये चूने की वजह से।
२. श्रीरंगपट्टणं
३. कार्ल मार्क्स
४. महात्मा गांधी
५. किन्हीं दो जीब्राओं पर एक ही प्रकार की लकीरें नहीं होतीं।
६. इंदौर, मध्यप्रदेश
७. जिंबावे
८. गीतांजलि
९. १९६२, अमेरीका में
१०. स्वामी दयानंद सरस्वती
११. पोलो, (ई.स. प्रथम शताब्दी)
१२. कर्नाटक
१३. बोर्नविल्ले (क्याड्बरी संस्था)
१४. जयदेव
१५. अलफ्रेड नोबेल, स्वीडन के रासायनिक शास्त्रवेत्ता, १८६७
१६. डा. अनिबिसेंट, १९१७ में

किचकिच पिशाच

एक दिन शाम को रतनपुर से, मदनपुर जाने के लिए, छे बैल गाड़ियों में बैठकर विवाह-स्थल पर पहुँचने, लोगों का एक समूह जा रहा था। दुलहिनवालों ने मनौती मानी थी कि विवाह लिंगेश्वर के आलय में संपन्न होगा। सब गाड़ियों के पीछे-पीछे एक गाड़ी आ रही थी, जिसमें रसोइये रसद के साथ बैठे थे।

गाड़ियाँ, जब मदनपुर की सरहद पर पहुँची, तब रसोइयों को अकस्मात् स्मरण आया कि मिठाइयों की टोकरी ले आना वे भूल गये। एक रसोइये ने कमल नामक एक युवक के कंधे पर हाथ रखकर कहा "यहाँ जितने भी हैं, उनमें से तुम्हीं पच्चीस वर्ष के एकमात्र युवक हो। हम सब रसोई का काम मात्र करने की क्षमता रखते हैं। हम दौड़ नहीं सकते। हममें इतनी ताक़त नहीं है। तुम तुरंत हमारे गाँव में जाओ और वह टोकरी ले आओ। क़िराये पर कोई गाड़ी ले लो और सबेरे तक पहुँच जाना। मुहूर्त तो कल रात को है, इसलिए कोई परेशानी नहीं।" कहकर उसने उसे पच्चीस रुपये दिये।

कमल साथी के कहे अनुसार गाँव लौटा। लौटते-लौटते अंधेरा हो गया। किराये की रक़म बचाने के लिए उसे एक उपाय सूझा। उसने सोचा, अगर अभी मिठाइयों की टोकरी लेकर समुद्री तट पर से होते हुए निकल पड़ूँ तो कल सबेरे तक पहुँच जाऊँगा।

उसने टोकरी अपने सिर पर रख ली और समुद्री तट के रेतीले टीलों पर से होते हुए पैदल चलने लगा। पूर्णिमा का दिन था। इसलिए चाँदनी खिली हुई थी। एक तरफ़ समुद्र था तो दूसरी तरफ़ बड़े-बड़े पेड़ थे। हवा में उनके आपस में टकराने से मधुर संगीत सुनायी दे रहा था।

कमल ने ऐसे वातावरण में कभी भी अकेले

प्रकाश भल्ला

यात्रा नहीं की थी। वह अंदर ही अंदर डरता हुआ आगे बढ़ रहा था। कभी समुद्र की ओर तो कभी पेड़ों की ओर मुड़-मुड़कर देख रहा था। थोड़ी दूर जाने के बाद वह थक गया और सिर से टोकरी उतारकर एक जगह पर बैठ गया।

उस समय, मशालों की कांति में, पुराने ज़माने की एक बड़ी नाव किनारे पर आकर रुक गयी। विदेशी वस्त्र पहने दस पिशाच नाव से उतरे। वे उसके पास आये। किचकिच करते हुए किकियाते हुए वे किसी भाषा में आपस में बातें कर रहे थे। पीछे-पीछे बबूल के पेड़ की तरह का एक मोटा पिशाच, बेंत की छड़ी घुमाता हुआ किनारे पर पहुँचा।

उन्हें देखकर कमल भय से थरथराने लगा। वह अपने ही आप बड़बड़ाने लगा ''पच्चीस रुपयों को बचाने के लिए अपनी जान को ख़तरे में डाल लिया। अभी-अभी शादी की और अनावश्यक ही कावेरी के साथ अन्याय कर बैठा। बेचारी विधवा हो जायेगी तो उसके जीवन का क्या होगा। जो भी हो, अपनी तरफ़ से बचने की पूरी कोशिश करूँगा, फिर भगवान की मर्ज़ी।'' उसने टोकरी सिर पर रख ली और बेतहाशा दौड़ने लगा।

पर, इतने में काला पिशाच दौड़ा-दौड़ा आया और अपनी छड़ी फेंककर उसे रोक लिया। उसने कमल से कहा ''बेटे, भाग मत जाना। पराये देश के पिशाचों के सामने ऐसा करके मेरा अपमान मत करना। मैं स्वदेशी

सवाल किये।

स्वदेशी पिशाच ने कमल से कहा "उनका कहना है कि बड़ी ही खुशबू आ रही है। बताओ, उस टोकरी में है क्या?" कहता हुआ उसने टोकरी का ढक्कन खोला।

सारे पिशाच उसके चारों ओर घिर आये। स्वदेशी पिशाच ने टोकरी में हाथ रखा और मिठाई ली। उन्हें मिठाई देते हुए स्वदेशी पिशाच ने कहा "शादी के समय ये पकवान बनते हैं। तुम लोग भी इसकी रुचि चखो।"

विदेशी पिशाचों को मूँग के लड्डू बहुत अच्छे लगे। उनमें से एक बृहत्काय पिशाच ने, दूसरे पिशाचों को धमकाया और टोकरी से मिठाइयाँ लीं और एक गठरी में बांध दीं। किच किच करते हुए स्वदेशी पिशाच से उसने कुछ कहा।

स्वदेशी पिशाच ने कमल से कहा "सरदार पिशाच को मूँग के लड्डू बहुत ही स्वादिष्ट लगे। कहता है कि जीवित रहता तो इस देश में आकर इन्हें खाने का सौभाग्य प्राप्त ना होता।"

"हाँ, हाँ, क्यों नहीं कहेगा। यह उसका भाग्य है तो यह मेरा दुर्भाग्य है कि मिठाइयाँ तुम सबने खा लीं। कल सुबह तक मैं विवाह-स्थल पर मिठाइयाँ लेकर नहीं पहुँचूँगा तो हमारे रसोइये बड़े-बड़े चिमटे तपाकर मेरे शरीर को जलाएँगे" कहता हुआ कमल अपने

पिशाच हूँ। जब जीवित था, विदेशों में जाकर बसने की इच्छा हुई। वहीं रह गया। मैं तुम्हारा दुभाषिया हूँ।"

इतने में विदेशी पिशाच पहुँचे। किचकिच भाषा में उन्होंने स्वदेशी पिशाच से कुछ सवाल किये। स्वदेशी पिशाच ने किचकिच भाषा में उत्तर दिया।

कमल ने अब अपने को थोड़ा-बहुत संभाल लिया और स्वदेशी पिशाच से पूछा "ये किचकिच पिशाच क्या कह रहे हैं?"

"वे पूछ रहे हैं कि तुम आदमी हो या पिशाच। मैंने उनसे कहा कि तुम जीवित मानव हो" स्वदेशी पिशाच ने बताया। इतने में विदेशी पिशाचों ने स्वदेशी से कई और

सिर को हाथों से मारने लगा।

स्वदेशी पिशाच से सरदार पिशाच ने विषय जान लिया। उसने खाली टोकरी ली और उड़कर चला गया। क्षणों में टोकरी लेकर वापस आया।

कमल ने टोकरी का ढक्कन खोलकर देखा तो वह भौंचक्का रह गया। टोकरी भर सोने की अशर्फ़ियाँ थीं।

कमल आँखें फाड़-फाड़कर उन्हें देखने लगा। फिर उसने स्वदेशी पिशाच से पूछा "यह विदेशी सोना हमारे देश में खपेगा ?"

स्वदेशी पिशाच ठठाकर हँसता हुआ बोला "अरे अबोध, सोना कोई स्वदेशी या विदेशी नहीं होता। यह सीमाओं से पार है। ज़रूरत पड़े तो नरक में भी सुनायास इसकी खपत हो सकती है।"

विदेशी पिशाचों की समझ में बात तो आयी नहीं होगी, लेकिन ज़ोर से तालियाँ बजाते हुए, स्वदेशी पिशाच से किच किच की।

स्वदेशी पिशाच ने कमल से कहा "तुम्हारा भाग्य चमक उठा। ये विदेशी पिशाच अगली पूर्णिमा के दिन फिर से आनेवाले हैं। इस बार और तरह-तरह के स्वादिष्ट पकवान ले आना। मूँग के लड्डू तो ज़रूर लाना।"

बाद कोलाहल मचाते हुए पिशाच नाव में बैठकर चले गये। विलंब किये बिना कमल घर की ओर निकल पड़ा। घर पहुँचते-पहुँचते आधी रात हो गयी। टोकरी को सिर पर रखे

बिलकुल गुप्त रखना।'' यों उसने उसे सावधान किया।

कमल जिस रहस्य को रहस्य ही रखना चाहता था, वह कनका को मालूम हो गया। क्योंकि वह बग़ल के हिस्से में ही किराये पर रहती थी। उसने उसकी सारी बातें सुन लीं। गाँव की पूरबी गली में कनका की मिठाई की दूकान थी। उसका पति सिंग दूकान में बैठता था। कमल अंधेरा छा जाते ही, बाहर जाता था और आधी रात को ही लौटता था। उसके लौटने के बाद ही दिया जलाया जाता था। बड़ी उत्सुकता से कनका खिड़की की दरार से यह सब देखती आ रही थी।

कनका के पति का नाम सिंग था, पर पत्नी के सामने भीगी बिल्ली था। कनका ने संक्षेप में उसे विषय बताया और कहा ''अगली पूर्णिमा के दिन गाड़ी भर के स्वादिष्ट पकवान बनाकर, किचकिच पिशाचों के पास जाएँगे, गाड़ी भर की अशर्फ़ियाँ लेकर लौटेंगे।''

सिंग ने सिर हिलाते हुए कहा ''ज़रूर। वैसा ही करेंगे।'' कनका गुर्राती हुई बोली ''बेकार सिर मत हिलाना। याद रखना कि उस समय कमल को समुद्री तट पर आने देना नहीं चाहिये। उसे वहाँ आने से रोकने के लिए हमें ऐसा करना होगा'' कहकर उसने सिंग के कान में कुछ कहा।

पत्नी के कहे अनुसार सिंग पूर्णिमा के तीन दिन पहले शहर गया। तीसरे दिन वह

लौटे पति को देखकर कावेरी कुछ कहने ही वाली थी कि कमल ने उससे कहा कि दरवाज़ा बंद करके आओ। बीच घर उसने एक दुपट्टा फैलाया और उसपर सोने की अशर्फ़ियाँ उँडेल दीं।

यह देखकर कावेरी के मुँह से एक भी शब्द ना निकला। वह एकटक उन अशर्फ़ियों को देखती ही रही। कमल ने जो हुआ, सविस्तार बताया। ''लगता है, ग्रह हमारे अनुकूल हैं। इसी कारण विदेशी पिशाचों की हम पर कृपा रही। अगली पूर्णिमा को स्वादिष्ट मिठाइयाँ बनाओ, क्योंकि उन्हें लेकर समुद्री तट पर जाना है ना! फिर गाँव में ही मिठाई की बड़ी दूकान खोलेंगे। किन्तु ये सारी बातें

वापस आया और उसने कमल की पत्नी कावेरी से कहा "तुम्हारी माँ बहुत बीमार है। परिस्थिति बड़ी ही नाज़ुक है। तुम्हें सूचित करने के लिए नौकर पहले ही भेजा गया था। क्या वह नहीं आया ?"

समाचार पाते ही कमल और कावेरी बहुत ही दुखी हुए। वे दोनों तुरंत शहर निकल पड़े। अपनी योजना को सफल देखकर कनका बेहद खुश हुई। गाड़ी भर की मिठाइयाँ लादकर, अपने पति के साथ समुद्री तट पर पहुँची, जहाँ किंचकिच पिशाच आनेवाले हैं।

आधी रात को पिशाचों की नाव किनारे पहुँची। स्वदेशी पिशाच अपनी बेत की छड़ी के सहारे, झुक-झुककर चलता हुआ, कावेरी के पास आया। पूछा "वह जवान कहाँ है?"

कनका ने बिना हिचकिचाये कहा "वह जवान बहुत ही घमंडी हो गया है। अब उसकी आँखें सिर पर हैं। पिशाचों के प्रति हम भक्ति और श्रद्धा रखते हैं। उनके लिए गाड़ी भर के पकवान ले आये।"

स्वदेशी पिशाच धीरे से कराहता हुआ बोला "किचकिच पिशाचों की बात मत पूछो। वे अब तो नहीं रहे। उसके लाये मूँग के लड्डू खाकर वे सब के सब बीमार पड़ गये। उन्हें, ऐसे लड्डू खाने की आदत ही नहीं थी ना। पिशाचों के सरदार ने लात मारकर मुझे वहाँ से भगा दिया। अब मैं स्वदेश में ही रहनेवाला हूँ।" कहता हुआ उड़ा और समीप के झुरमुट में चला गया।

सिंग ने कहा "कनका, हमारी दुराशा ने हमें कहीं का ना रखा। बहुत कर्ज़ भी लिया और बहुत-सी मिठाइयाँ बनवायीं। अब कर्ज़ कैसे चुकाएँ ?" अपना सिर अपने दोनों हाथों में लेकर, रोता हुआ बोला।

जो हुआ, उसपर कनका स्तब्ध रह गयी। उसने कहा "जो हुआ, भूल जाओ। अब हम गाँव लौटने की स्थिति में नहीं हैं। मेरे मायके जाएँगे और कुछ दिनों तक वहीं रह लेंगे।" कहकर वह गाड़ी की तरफ़ बढ़ी। सिंग सिर झुकाकर पत्नी के पीछे-पीछे गया।
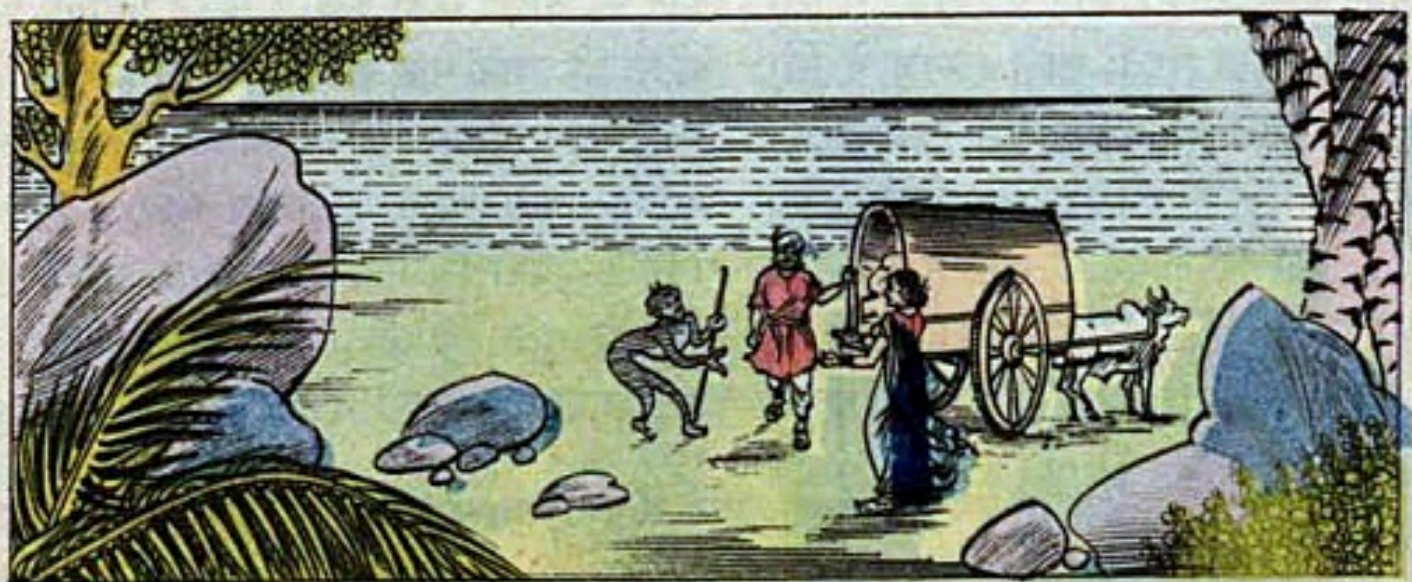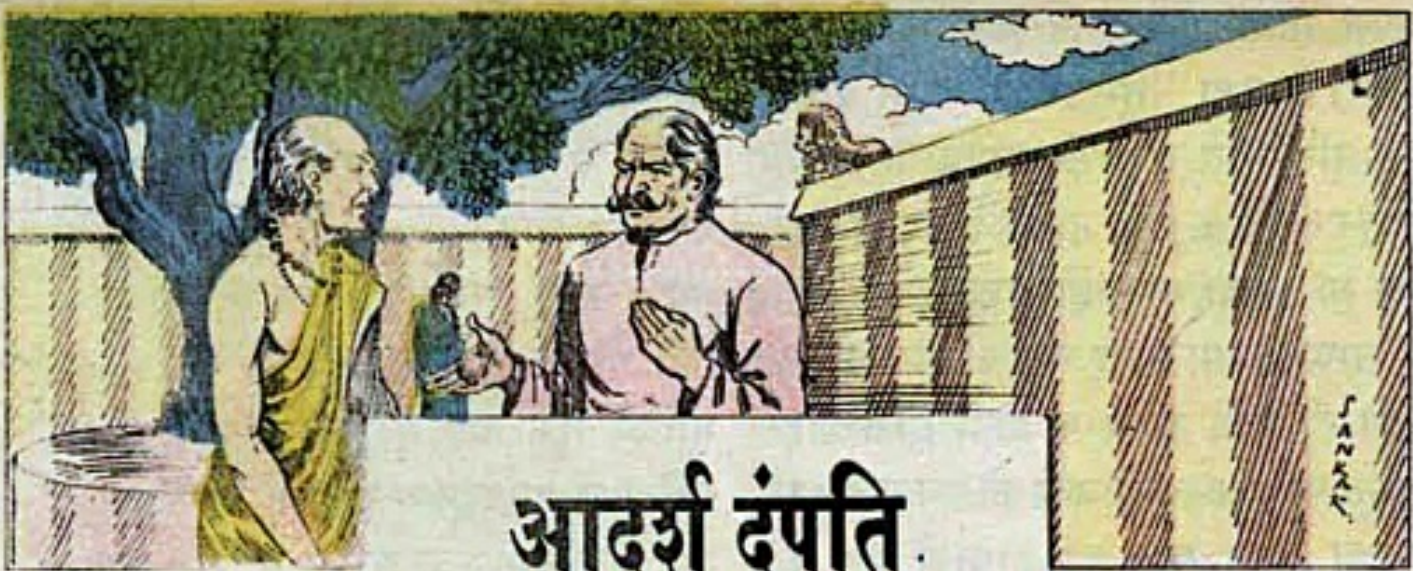
आदर्श दंपति

बहुत पहले की बात है। प्रयाग में एक व्यापारी रहा करता था। वह केवल संपन्न ही नहीं, बल्कि सज्जन भी था। सब प्रकार से उसकी पत्नी भी पति के ही समान उत्तम थी। उनके जीवन में एक ही कमी थी। वह थी उनका बेटा शशिकेतु।

शशिकेतु एकदम पापी था। बचपन से ही उसने बुरे लोगों से दोस्ती की। बुरी सोहबत में उसने अनगिनत बुरे काम किये। पिता ने उसे डाँटा, माँ ने गिड़गिड़ाया, पर कोइं फ़ायदा नहीं हुआ। उसने अपनी पद्धति नहीं बदली। उसकी वजह से माँ-बाप को लज्जा से सिर झुकाकर रहना पड़ता ता। समाज में सिर उठाकर चलने का साहस नहीं होता था।

पुजारी, व्यापारी का एक निकट मित्र था। उसने अपने बेटे के बारे में एक दिन पुजारी से कहा ''हमारे शशि की दुष्टता दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। हमारी सारी सलाहें व्यर्थ हो गयीं। हमने सोचा था कि बड़े होते-होते वह सुधर जायेगा। अब इसकी भी आशा ना रही। तुम्हीं बताओ कि वह कैसे सुधरेगा? मेरी पत्नी मनोव्यथा से पीड़ित है, उसी के कारण। वह सुधर नहीं जायेगी तो उसके जिन्दा रहने की उम्मीद भी नहीं।''

''सच कहा जाए तो आप दोनों की अच्छाई ने ही, उसे इस स्थिति में ला खड़ा कर दिया। आप की आड़ में ही वह सांड की तरह घूम-फिर रहा है। मेरी सलाह है कि उसे किसी दूर प्रॉत में भेज दीजिये। वहाँ जाने पर ना ही कहीं आराम से रह पायेगा, या ना ही उसके पास खर्च करने धन होगा। तब उसका दिमाग़ ठिकाने आयेगा। अपनी जीविका को चलाने के प्रयास स्वयं करने पड़ेंगे। अपनी जिम्मेदारी समझ में आयेगी तो वही सुधर जायेगा। अपने कर्तव्य को जान जायेगा'' पुजारी ने सलाह दी।

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

पुजारी की सलाह व्यापारी को सही लगी। उसने अपने बेटे को बुलाकर कहा "शशि, तुम किसी दूर प्रॉत में चले जाओ। वहाँ अच्छे मार्ग पर चलो। सद्‌गुणी बनो; अपना कर्तव्य जानो। अच्छा नाम कमाओ। तुम सुधर जाओगे और अच्छा नाम कमाओगे, तो इससे बढ़कर मुझे और क्या चाहिये। तुम बताओ कि कहाँ जाना चाहते हो?"

शशिकेतु ने कहा "मुझे काशी भेजिये।" उसने अपने मित्रों से सुन रखा था कि उस पुण्यक्षेत्र में पापी स्वच्छंद विचरते रहते हैं। काशी में पुजारी का, दूर का एक रिश्तेदार था। पुजारी ने उसके नाम एक चिट्ठी शशिकेतु को दी। उसे लेकर शशि काशी निकल पड़ा।

लगा कि पुजारी का परामर्श सफल हुआ। क्योंकि कभी-कभी पुजारी के रिश्तेदार से पत्र आया करते थे कि शशिकेतु ठीक है और सही मार्ग पर चल रहा है। पुजारी उन पत्रों को पढ़कर व्यापारी को सुनाता था। व्यापारी और उसकी पत्नी, इस बात पर प्रसन्न हुए कि उनका बेटा सुधर रहा है। इससे बढ़कर एक माँ-बाप को और क्या चाहिये।

इतने में बहुत ही बड़ा दुखद समाचार मिला। शशिकेतु के बारे में पुजारी के नाम एक पत्र आया। उसमें लिखा हुआ था कि कुछ जुवारी तथा पियक्कडों से शशि का झगड़ा हो गया। फलस्वरूप उन्होंने शशि को बड़ी निर्दयता से मार ड़ाला।

अब इस ख़त से पुजारी को स्पष्ट हो गया कि दूर प्रॉत में जाने के बाद भी शशिकेतु में कोई परिवर्तन नहीं आया है। पुजारी की समझ में नहीं आया कि इस बुरी ख़बर को, व्यापारी के कानों में कैसे डालूँ? उसकी पत्नी तो बीमार रहती है। यह ख़बर सुनकर उसे कुछ हो गया तो ? इसलिए पुजारी ने निर्णय किया कि व्यापारी को अलग बुलाकर बता दूँगा। अपने बेटे की मौत की ख़बर सुनकर व्यापारी निस्तेज हो गया। उसने अपने आप को संभाल लिया और पुजारी से कहा "मुझे पहले से ही संदेह था कि ऐसी दुर्घटना होने की संभावना है। मुझे जिसका ड़र था, वही

हुआ। हमने आशा बाँध रखी थी कि दूर प्रांत में जाने पर वह सुधर जायेगा। किन्तु वह सुधरा नहीं। उसकी नीयत ही ऐसी थी।'' लंबी साँस खींचते हुए पुजारी से फिर कहा ''मित्र, यह सच्चाई मेरी पत्नी को मालूम ना हो। वैसे ही वह बहुत बीमार है। उसे यह बात मालूम हो जाए तो अवश्य ही प्राण त्याग देगी। उससे यह सदमा सहा नहीं जायेगा। अधिक और समय तक जीवित भी नहीं रहेगी। कम से कम इसका विश्वास करती हुई वह मर जाए कि मेरा बेटा दूर प्रांत में सुख से रह रहा है। आगे से भी स्वयं लिखकर पत्र लेते आना और मुझे, मेरी पत्नी को सुनाते रहना।''

''ऐसा ही करूँगा। तुम्हारी पत्नी के दिल को किसी प्रकार का धक्का पहुँचने नहीं दूँगा। यह मेरी जिम्मेदारी है।'' पुजारी ने कहा। हर महीने पुजारी एक पत्र ले आता और पति-पत्नी को सुनाता।

पुजारी एक बार चिट्ठी ले आया और कहा ''काशी से चिट्ठी आयी है। आपका बेटा वहाँ बिल्कुल ठीक है। हमारे रिश्तेदार ने लिखा है कि उसे राज-दरबार में बहुत जल्द नौकरी मिलनेवाली है।''

दूसरी बार चिट्ठी लेकर जब पुजारी आया तब उसने पत्र पढ़ते हुए कहा ''आनेवाले वैशाख पाड्यमी के दिन शशि राज-दरबार की नौकरी में नियुक्त होनेवाला है।''

तीसरी बार पुजारी ने समाचार दिया ''राजा ने आपके बेटे को मूल्यवान भेंट दी। राजा ने आश्वासन भी दिया कि उसके विवाह का प्रबंध भी स्वयं करेंगे।''

चौथी बार समाचार लाया ''वह आप को देखने के लिए आतुर है। छुट्टी मिलते ही आपसे मिलने आनेवाला है।''

जब-जब पुजारी आता था, तब-तब व्यापारी और उसकी पत्नी बड़े उत्साह और आदर से उसका स्वागत करते थे। उसकी बातें बड़ी श्रद्धा से सुनते थे। यद्यपि व्यापारी की पत्नी रोग-ग्रस्त थी, खाट पर ही पड़ी रहती थी, फिर भी जब कभी भी पुजारी आता, उसका चेहरा आनंद से खिला हुआ

होता था। वह अपने चेहरे पर दुख की एक रेखा भी खिंचने नहीं देती थी।

पुजारी अपने ही आप इस बात पर दुखी रहा करता था कि ऐसी धर्मपत्नी को मुझे धोखे में रखना पड़ रहा है। किन्तु पत्र के सुखद समाचारों को सुनते हुए, उसके अपार आनंद को देखकर अपने को शांत कर लेता और कह लेता "मैं अच्छा ही काम कर रहा हूँ। ऐसी धर्मपत्नी के आनंद से बढ़कर मुझे और क्या चाहिये। मैं जान-बूझकर उन्हें धोखा दे रहा हूँ, किन्तु इसमें मेरा कोई स्वार्थ नहीं।" यों चार साल बीत गये। व्यापारी की पत्नी की हालत दिन-ब-दिन नाजुक होती जा रही थी। अब वह बिल्कुल ही उठने-बैठने की स्थिति में नहीं थी।

वैद्यों ने कह दिया कि वह और अधिक दिनों तक जीवित नहीं रहेगी। एक दिन पुजारी को समाचार मिला कि व्यापारी की पत्नी किसी भी क्षण मर सकती है। पुजारी शीघ्र वहाँ पहुँच गया। उस समय व्यापारी घर पर नहीं था।

व्यापारी की पत्नी ने फीकी हँसी हँसकर कहा "बेटे, सत्य से मैं बहुत ही पहले से ही परिचित हूँ। मुझे मालूम है कि शशि मर गया। काशी के तुम्हारे बंधु उत्तम व्यक्ति हैं। हम उनका ऋण चुका नहीं पायेंगे। शशि की मौत की ख़बर अगर मेरे पति को मालूम हो जाती तो उनकी दशा बहुत ही हीन होती। इसीलिए मैंने यह बात उनसे छिपा रखी कि हमारा शशि इस दुनिया में नहीं है। तुम क़सम खाओ कि मेरे पति को भविष्य में भी यह सच्चाई मालूम नहीं होने दोगे। अगर ऐसा नहीं हुआ तो मुझे अशांत ही मरना होगा। जब तक वे जीवित हों, तब तक उन्हें यह सच्चाई मालूम नहीं होनी चाहिये। यही मेरी अंतिम इच्छा है।" कहकर व्यापारी की पत्नी मृत्यु की शरण में चली गयी।

पुजारी को दुख नहीं हुआ, उल्टे उसे बहुत आनंद हुआ। उसने सोचा, कितने उत्तम आदर्श दंपति हैं। वे दोनों नहीं चाहते थे कि यह विषादवार्ता दूसरे को मालूम हो।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, जनवरी, १९९६ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

Mahantesh C. Morabad

Mahantesh C. Morabad

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० नवम्बर, '९५ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.

सितम्बर, १९९५, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **चाल मेरी ऐसी मतवाली**

दूसरा फोटो : **जैसे लट्टू चकरवाली**

प्रेषक : **थंकटेश्वर साहू**

C/o. श्री. कौशल साहू, मराठा पारा, धमतरी, रायपूर जिला, छत्तीसगढ़ (म.प्र.)

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु ६०/-

चन्दा भेजने का पता :

डाल्टन एजन्सीज़, चन्दामामा बिल्डिंग्ज़, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

---

nutrine

nutrine
COCONUT
COOKIES